अध्याय १२

गुण्डिचा मन्दिर की सफाई

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने इस अध्याय का सारांश अपनी पुस्तक *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में इस प्रकार दिया है : उड़ीसा के राजा महाराज प्रतापरुद्र ने श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने के लिए भरसक प्रयास किया। श्रील नित्यानन्द प्रभु तथा अन्य भक्तों ने महाप्रभु को राजा की इच्छा बतलायी, किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु उनसे मिलने के लिए राजी नहीं हुए। तभी श्री नित्यानन्द प्रभु को एक युक्ति सूझी और उन्होंने महाप्रभु की बाह्य पोशाक का एक कपड़ा राजा के पास भेजा। अगले दिन जब रामानन्द राय ने फिर से महाप्रभु से अनुरोध किया कि वे राजा से मिल लें, तो महाप्रभु ने मना करते हुए रामानन्द राय से कहा कि वे चाहें तो राजा के पुत्र को उनके सामने बुलायें। राजकुमार वैष्णव-वेश में महाप्रभु के समक्ष उपस्थित हुआ, जिससे कृष्ण की स्मृति जाग्रत हो उठी। इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने महाराज प्रतापरुद्र के पुत्र का उद्धार किया।

तत्पश्चात् श्री चैतन्य महाप्रभु ने रथयात्रा सम्पन्न होने के पूर्व गुण्डिचा मन्दिर की धुलाई की। फिर उन्होंने इन्द्रद्युम्न सरोवर में स्नान किया और निकटवर्ती बाग में प्रसाद ग्रहण किया। जब महाप्रभु गुण्डिचा मन्दिर की धुलाई कर रहे थे, तब किसी गौड़ीय वैष्णव ने महाप्रभु के पाँवों को धोकर उसका पानी पी लिया। यह घटना इसलिए महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इससे भक्त में प्रेमभाव उत्पन्न हो आया। इसके बाद अद्वैत प्रभु का पुत्र गोपाल कीर्तन के समय मूर्छित हो गया, किन्तु जब उसे होश नहीं आया, तो श्री चैतन्य महाप्रभु ने उसे जगाकर उसे अपनी कृपा प्रदान की। प्रसाद वितरण के समय नित्यानन्द प्रभु तथा अद्वैत प्रभु में कुछ हास्य-विनोद की बातें भी हुईं। अद्वैत प्रभु ने कहा कि नित्यानन्द

प्रभु को कोई नहीं जानता और गृहस्थ ब्राह्मण का यह कर्तव्य नहीं है कि वह समाज में अज्ञात व्यक्ति के साथ भोजन ग्रहण करे। इस विनोदपूर्ण टिप्पणी के प्रत्युत्तर में नित्यानन्द प्रभु ने कहा कि अद्वैत आचार्य अद्वैतवादी हैं और यदि कोई उनके साथ भोजन करे तो न जाने उसका मन किस दिशा में चला जाए। इन दोनों प्रभुओं की वार्ता के पीछे गूढ़ अर्थ छिपा हुआ है, जिसे केवल बुद्धिमान व्यक्ति ही समझ सकता है। जब सारे वैष्णव भोजन कर चुके, तो स्वरूप दामोदर तथा अन्यों ने कमरे के भीतर ही प्रसाद ग्रहण किया। जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने अनवसर के बाद (विग्रह का निवृत्ति काल पूर्ण होने के बाद) जगन्नाथ अर्चाविग्रह को देखा, तो वे परम आनन्दित हुए। उस समय भगवान् चैतन्य के साथ अनेक भक्त थे और वे भी परम प्रसन्न थे।

श्री-गुण्डिचा-मन्दिरमात्म-वृन्दैः
सम्मार्जयन्क्षालनतः स गौरः ।
स्व-चित्त-वच्छीतलमुज्ज्वलं च
कृष्णोपवेशौपयिकं चकार ॥१॥

श्री-गुण्डिचा—श्री गुण्डीचा; **मन्दिरम्**—मन्दिर; **आत्म-वृन्दैः**—अपने साथियों के साथ; **सम्मार्जयन्**—धोया; **क्षालनतः**—साफ करके; **सः**—उन; **गौरः**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **स्व-चित्त-वत्**—अपने हृदय की तरह; **शीतलम्**—शीतल; **उज्ज्वलम्**—उज्ज्वल; **च**—तथा; **कृष्ण**—भगवान् श्रीकृष्ण के; **उपवेश**—बैठने के लिए; **औपयिकम्**—योग्य; **चकार**—बनाया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने भक्तों और संगियों के साथ गुण्डिचा मन्दिर को धोया तथा उसकी सफाई की और इस तरह उन्होंने मन्दिर को अपने हृदय के ही समान शीतल तथा उज्ज्वल बना दिया, जिससे वह श्रीकृष्ण के बैठने के लिए अनुकूल स्थान बन सका।

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २॥

जय जय—जय हो; **गौरचन्द्र**—गौरचन्द्र, श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय**—जय हो; **अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत प्रभु की; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की।

अनुवाद

गौरचन्द्र की जय हो! नित्यानन्द की जय हो! अद्वैत आचार्य की जय हो! श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

जय जय श्रीवासादि गौर-भक्त-गण ।
शक्ति देह,—करि येन चैतन्य वर्णन ॥ ३॥

जय जय श्रीवासादि गौर-भक्त-गण ।
शक्ति देह,—करि ग्रेन चैतन्य वर्णन ॥ ३॥

जय जय—ज़य हो; **श्रीवास-आदि**—श्रीवास ठाकुर आदि; **गौर-भक्त-गण**—श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की; **शक्ति देह**—कृपया मुझे शक्ति दो; **करि ग्रेन**—ताकि मैं कर सकूँ; **चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **वर्णन**—वर्णन।

अनुवाद

श्रीवास ठाकुर इत्यादि श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की जय हो! मैं उनसे शक्ति प्रदान करने की याचना करता हूँ, जिससे श्री चैतन्य महाप्रभु का उचित ढंग से वर्णन कर सकूँ।

पूर्वे दक्षिण हैते प्रभु यबे आइला ।
ताँरे मिलिते गजपति उत्कण्ठित हैला ॥ ४॥

पूर्वे दक्षिण हैते प्रभु ग्रबे आइला ।
ताँरे मिलिते गजपति उत्कण्ठित हैला ॥ ४॥

पूर्वे—पहले समय में; **दक्षिण हैते**—दक्षिण भारत से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ग्रबे**—

जब; **आइला**—लौटे थे; **ताँरे**—उनको; **मिलिते**—मिलने के लिए; **गजपति**—उड़ीसा का राजा; **उत्कण्ठित**—उत्सुक; **हैला**—हो गया।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु अपनी दक्षिण भारत की यात्रा से वापस लौट आये, तब उड़ीसा के राजा महाराज प्रतापरुद्र उनसे मिलने के लिए अत्यन्त आतुर हो उठे।

কটক হৈতে পত্রী দিল সার্বভৌম-ঠাঞি ।
প্রভুর আজ্ঞা হয় যদি, দেখিবারে যাই ॥৫॥

কটক হৈতে পত্রী দিল সার্বভৌম-ঠাঞি ।
প্রভুর আজ্ঞা হয় যদি, দেখিবারে যাই ॥৫॥

कटक हैते—उड़ीसा की राजधानी कटक से; **पत्री**—एक पत्र; **दिल**—भेजा; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य के; **ठाञि**—स्थान को; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **आज्ञा**—अनुमति; **हय**—हो; **यदि**—यदि; **देखिबारे याइ**—मैं दर्शन के लिए आ सकूँ।

अनुवाद

राजा ने अपनी राजधानी कटक से सार्वभौम भट्टाचार्य के पास एक चिट्ठी भेजी, जिसमें यह अनुरोध किया गया था कि वे महाप्रभु से यह आज्ञा प्राप्त कर लें, ताकि वे वहाँ आकर उनसे मिल सके।

ভট্টাচার্য লিখিল,—প্রভুর আজ্ঞা না হৈল ।
পুনরপি রাজা তাঁরে পত্রী পাঠাইল ॥৬॥

ভট্টাচার্য্য লিখিল,—প্রভুর আজ্ঞা না হৈল ।
পুনরপি রাজা তাঁরে পত্রী পাঠাইল ॥৬॥

भट्टाचार्य्य लिखिल—सार्वभौम भट्टाचार्य ने उत्तर दिया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **आज्ञा**—अनुमति; **ना**—नहीं; **हैल**—है; **पुनरपि**—पुनः; **राजा**—राजा ने; **ताँरे**—उनको; **पत्री**—एक पत्र; **पाठाइल**—भेजा।

अनुवाद

राजा के पत्र का उत्तर देते हुए सार्वभौम भट्टाचार्य ने लिखा कि श्री

चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा नहीं मिल सकी। इसके बाद राजा ने उनको दूसरा पत्र लिखा।

প্রভুর নিকটে আছে যত ভক্ত-গণ ।
মোর লাগি' তাঁ-সবারে করিহ নিবেদন ॥৭॥

প্রভুর নিকটে আছে যত ভক্ত-গণ ।
মোর লাগি' তাঁ-সবারে করিহ নিবেদন ॥৭॥

प्रभुर निकटे—श्री चैतन्य महाप्रभु के पास; **आछे**—हैं; **यत**—सभी; **भक्त-गण**—भक्तगण; **मोर लागि'**—मेरे लिए; **ताँ-सबारे**—उन सबको; **करिह**—कृपया करो; **निवेदन**—प्रार्थना।

अनुवाद

राजा ने इस पत्र में सार्वभौम भट्टाचार्य से प्रार्थना की, "कृपया मेरी ओर से महाप्रभु के सारे भक्तों से यह निवेदन करें और मेरी ओर से यह पत्र उनको दे दें।

সেই সব দয়ালু মোরে হঞা সদয় ।
মোর লাগি' প্রভু-পদে করিবে বিনয় ॥৮॥

সেই সব দয়ালু মোরে হঞা সদয় ।
মোর লাগি' প্রভু-পদে করিবে বিনয় ॥৮॥

सेइ सब—वे सब; **दयालु**—दयालु; **मोरे**—मुझ पर; **हञा**—होकर; **स-दय**—पक्ष में; **मोर लागि'**—मेरे लिए; **प्रभु-पदे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **करिबे**—करेंगे; **विनय**—विनम्र निवेदन।

अनुवाद

"यदि महाप्रभु से सम्बन्धित सारे भक्त मेरे प्रति अनुकूल हों, तो वे महाप्रभु के चरणकमलों में मेरा यह निवेदन प्रस्तुत कर सकते हैं।

তাঁ-সবার প্রসাদে মিলে শ্রী-প্রভুর পায় ।
প্রভু-কৃপা বিনা মোর রাজ্য নাহি ভায় ॥৯॥

ताँ-सबार प्रसादे मिले श्री-प्रभुर पाय ।
प्रभु-कृपा विना मोर राज्य नाहि भाय ॥ ९ ॥

ताँ-सबार प्रसादे—उन सबकी कृपा से; **मिले**—मिलते हैं; **श्री-प्रभुर पाय**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल; **प्रभु-कृपा**—महाप्रभु की कृपा के; **विना**—बिना; **मोर**—मेरा; **राज्य**—राज्य; **नाहि**—नहीं; **भाय**—मुझे अच्छा लगता।

अनुवाद

"समस्त भक्तों की कृपा से ही किसी को महाप्रभु के चरणों की शरण मिल सकती है। महाप्रभु की कृपा के बिना मुझे अपना राज्य अच्छा नहीं लगता।

যদি মোরে কৃপা না করিবে গৌরহরি ।
রাজ্য ছাড়ি' যোগী হই' হইব ভিখারী ॥ ১০ ॥

য়দি মোরে কৃপা না করিবে গৌরহরি ।
রাজ্য ছাড়ি' য়োগী হই' হইব ভিখারী ॥ ১০ ॥

য়দি—यदि; **मोरे**—मुझ पर; **कृपा**—कृपा; **ना**—नहीं; **करिबे**—करेंगे; **गौरहरि**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **राज्य छाड़ि'**—राज्य छोड़कर; **य़ोगी**—योगी; **हइ'**—होकर; **हइब**—हो जाऊँगा; **भिखारी**—एक भिखारी।

अनुवाद

"यदि गौरहरि, श्री चैतन्य महाप्रभु मुझ पर कृपा नहीं करेंगे, तो मैं अपना राज्य छोड़कर योगी बन जाऊँगा और द्वार-द्वार भिक्षा माँगूंगा।"

ভট্টাচার্য পত্রী দেখি' চিন্তিত হঞা ।
ভক্ত-গণ-পাশ গেলা সেই পত্রী লঞা ॥ ১১ ॥

भट्टाचार्य्य पत्री देखि' चिन्तित हञा ।
भक्त-गण-पाश गेला सेइ पत्री लञा ॥ ११ ॥

भट्टाचार्य्य—सार्वभौम भट्टाचार्य; **पत्री**—पत्र; **देखि'**—देखकर; **चिन्तित हञा**—अत्यन्त चिन्तित हो गये; **भक्त-गण**—सभी भक्तों के; **पाश**—पास; **गेला**—गये; **सेइ**—वह; **पत्री**—पत्र; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

जब भट्टाचार्य को यह पत्र मिला, तो वे अत्यधिक चिन्तित हो उठे। वे उस पत्र को लेकर महाप्रभु के भक्तों के पास गये।

सबारे मिलिया कहिल राज-विवरण ।
पिछे सेई पत्री सबारे कराइल दरशन ॥ १२॥

सबारे मिलिया कहिल राज-विवरण ।
पिछे सेइ पत्री सबारे कराइल दरशन ॥ १२॥

सबारे—सबसे ; **मिलिया**—मिलकर; **कहिल**—कहने लगे; **राज-विवरण**—राजा की इच्छा का वर्णन; **पिछे**—बाद में; **सेइ पत्री**—वही पत्र; **सबारे**—सबको; **कराइल दरशन**—दिखाया।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने सारे भक्तों से मिलकर राजा की इच्छा बतलाई। फिर उन्होंने सबको वह पत्र दिखाया।

पत्री देखि' सबार मने हइल विस्मय ।
प्रभु-पदे गजपतिर एत भक्ति हय! ॥ १३॥

पत्री देखि' सबार मने हइल विस्मय ।
प्रभु-पदे गजपतिर एत भक्ति हय! ॥ १३॥

पत्री—पत्र; **देखि'**—देखकर; **सबार**—सबके; **मने**—मन में; **हइल**—हुआ; **विस्मय**—आश्चर्य; **प्रभु-पदे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **गजपतिर**—उड़ीसा के राजा की; **एत**—इतनी; **भक्ति**—भक्ति; **हय**—है।

अनुवाद

पत्र पढ़कर सभी लोग चकित थे कि श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर राजा की इतनी भक्ति है।

सबे कहे,—प्रभु ताँरे कभु ना मिलिबे ।
आमि-सब कहि यदि, दुःख से मानिबे ॥ १४॥

सबे कहे,——प्रभु ताँरे कभु ना मिलिबे ।
आमि-सब कहि ग्रदि, दुःख से मानिबे ॥ १४॥

सबे कहे—सबने कहा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँरे**—उनको; **कभु**—किसी समय; **ना**—नहीं; **मिलिबे**—मिलेंगे; **आमि-सब**—हम सब; **कहि**—कहें; **ग्रदि**—यदि; **दुःख**—दुःख; **से**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मानिबे**—अनुभव करेंगे।

अनुवाद

भक्तों ने अपना विचार प्रकट किया, "महाप्रभु कभी भी राजा से नहीं मिलेंगे और यदि हम उनसे मिलने की प्रार्थना करें, तो वे निश्चित रूप से दुःखी हो जायेंगे।"

সার্বভৌম কহে,——সবে চল' এক-বার ।
মিলিতে না কহিব, কহিব রাজ-ব্যবহার ॥১৫॥

सार्वभौम कहे,——सबे चल' एक-बार ।
मिलिते ना कहिब, कहिब राज-व्यवहार ॥ १५॥

सार्वभौम कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा; **सबे चल'**—आओ हम सब चलें; **एक-बार**—एक बार; **मिलिते**—मिलने के लिए; **ना कहिब**—हम अनुरोध नहीं करेंगे; **कहिब**—हम मात्र वर्णन करेंगे; **राज-व्यवहार**—राजा का व्यवहार।

अनुवाद

तब सार्वभौम भट्टाचार्य ने कहा, "हम एक बार पुनः महाप्रभु के पास चलेंगे, किन्तु हम उनसे राजा से भेंट करने के लिए नहीं कहेंगे। बल्कि हम केवल राजा के उत्तम व्यवहार के विषय में ही कहेंगे।"

এত বলি' সবে গেলা মহাপ্রভুর স্থানে ।
কহিতে উন্মুখ সবে, না কহে বচনে ॥১৬॥

एत बलि' सबे गेला महाप्रभुर स्थाने ।
कहिते उन्मुख सबे, ना कहे वचने ॥ १६॥

एत बलि'—इस प्रकार निर्णय करके; **सबे**—वे सब; **गेला**—गये; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **स्थाने**—स्थान पर; **कहिते**—कहने के लिए; **उन्मुख**—तैयार होकर; **सबे**—सभी; **ना**—नहीं; **कहे**—कह सके; **वचने**—एक शब्द भी।

अनुवाद

इस तरह तय करके वे सभी श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर गये। वहाँ वे कुछ कहना तो चाहते थे, किन्तु एक शब्द भी नहीं कह पाये।

प्रभु कहे,—कि कहिते सबार आगमन ।
देखिये कहिते चाह,—ना कह, कि कारण? ॥ १७॥

प्रभु कहे,—कि कहिते सबार आगमन ।
देखिये कहिते चाह,—ना कह, कि कारण? ॥ १७॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **कि**—क्या; **कहिते**—कहने के लिए; **सबार**—तुम सब; **आगमन**—आये हो; **देखिये**—मैं देखता हूँ; **कहिते चाह**—तुम कुछ कहना चाहते हो; **ना कह**—परन्तु कह नहीं पा रहे हो; **कि कारण**—क्या कारण है।

अनुवाद

जब वे लोग श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर आ गये, तो उन्हें देखकर महाप्रभु ने कहा, "तुम सभी लोग यहाँ क्या कहने आये हो? मैं देख रहा हूँ कि तुम लोग कुछ कहना चाहते हो, किन्तु कह नहीं रहे। क्या कारण है?"

নিত্যানন্দ কহে,—তোমায় চাহি নিবেদিতে ।
না কহিলে রহিতে নারি, কহিতে ভয় চিত্তে ॥ ১৮॥

নিত্যানন্দ কহে,—তোমায় চাহি নিবেদিতে ।
না কহিলে রহিতে নারি, কহিতে ভয় চিত্তে ॥ ১৮॥

নিত্যানন্দ কহে—নিত্यानन्द प्रभु ने कहा; **তোমায়**—आपको; **চাহি**—हम चाहते हैं; **নিবেদিতে**—कुछ निवेदन करना; **না কহিলে**—यदि हम नहीं कहते हैं; **রহিতে নারি**—हम नहीं रह सकते; **কহিতে**—किन्तु कहते हुए; **ভয় চিত্তে**—हमें भय लगता है।

अनुवाद

तब नित्यानन्द प्रभु ने कहा, "हम आपसे कुछ कहना चाहते हैं। यद्यपि हमसे बिना कहे रहा नहीं जाता, किन्तु कहते हुए हमें अत्यधिक भय हो रहा है।

योग्यायोग्य तोमाय सब चाहि निवेदिते ।
तोमा ना मिलिले राजा चाहे योगी हैते ॥ १९॥

य्रोग्यायोग्य तोमाय सब चाहि निवेदिते ।
तोमा ना मिलिले राजा चाहे य्रोगी हैते ॥ १९॥

य्रोग्य—उचित; **अयोग्य**—अनुचित; **तोमाय**—आपको; **सब**—हम सब; **चाहि**—चाहते हैं; **निवेदिते**—निवेदन करना; **तोमा**—आपको; **ना मिलिले**—यदि वह नहीं मिलता; **राजा**—राजा; **चाहे**—चाहता है; **य्रोगी हैते**—योगी हो जाना।

अनुवाद

"हम आपसे कुछ ऐसी बात कहना चाहते हैं, जो उचित हो सकती है और नहीं भी हो सकती। बात यह है—यदि उड़ीसा का राजा आपके दर्शन नहीं पाता, तो वह योगी बन जायेगा।"

काणे मुद्रा लइ' मुञि हइब भिखारी ।
राज्य-भोग नहे चित्ते विना गौरहरि ॥२०॥

काणे मुद्रा लइ' मुञि हइब भिखारी ।
राज्य-भोग नहे चित्ते विना गौरहरि ॥ २०॥

काणे मुद्रा—कान की बाली; **लइ'**—लेकर; **मुञि**—मैं; **हइब**—हो जाऊँगा; **भिखारी**—एक भिखारी; **राज्य-भोग**—राज्य-भोग; **नहे**—नहीं; **चित्ते**—मन में; **विना**—बिना; **गौरहरि**—श्री चैतन्य महाप्रभु के।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु ने कहा, "राजा ने निश्चय किया है कि वह भिखारी बनकर अपने कानों में हाथी-दाँत की बालियाँ पहन लेगा। वह श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों का दर्शन किये बिना अपने राज्य का भोग नहीं करना चाहता।"

तात्पर्य

भारत में आज भी पेशेवर योगियों का एक ऐसा वर्ग है, जो पश्चिमी देशों के जिप्सियों जैसा है। वे कुछ जादू तथा योग-विधियाँ जानते हैं और उनका कार्य है द्वार-द्वार जाकर कभी याचना करके और कभी धमकाकर भीख माँगना। ऐसे योगी कभी-कभी कनफटा योगी भी कहलाते हैं। *कनफटा* शब्द सूचक

है ऐसे व्यक्ति का जिसने हाथी-दाँत की बनी बाली (मुद्रा) पहनने के लिए कान में छेद करा रखा हो। महाराज प्रतापरुद्र श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन न कर पाने के कारण इतने हताश हो गये थे कि वे ऐसा ही योगी बनना चाह रहे थे। सामान्य लोग सोचते हैं कि योगी के कान में बाली (मुद्रा) अवश्य होनी चाहिए, किन्तु यह असली योगी का चिह्न नहीं है। महाराज प्रतापरुद्र भी सोचते थे कि योगी बनने के लिए कान में ऐसी मुद्रा पहनना आवश्यक है।

দেখিব সে মুখ-চন্দ্র নয়ন ভরিয়া ।
ধরিব সে পাদ-পদ্ম হৃদয়ে তুলিয়া ॥২১॥

देखिब से मुख-चन्द्र नयन भरिया ।
धरिब से पाद-पद्म हृदये तुलिया ॥ २१ ॥

देखिब—मैं देखूँगा; **से**—वह; **मुख-चन्द्र**—चन्द्रमा के समान मुख; **नयन भरिया**—नयनों की तृप्ति तक; **धरिब**—मैं रखूँगा; **से**—उन; **पाद-पद्म**—चरणकमलों को; **हृदये**—अपने हृदय पर; **तुलिया**—उठाकर।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु ने आगे कहा, "राजा ने यह भी अभिलाषा व्यक्त की है कि वे महाप्रभु के चन्द्रमा सदृश मुख को दृष्टिभर देखना चाहते हैं। वे महाप्रभु के चरणकमलों को उठाकर अपने हृदय पर रखना चाहते हैं।"

যদ্যপি শুনিয়া প্রভুর কোমল হয় মন ।
তথাপি বাহিরে কহে নিষ্ঠুর বচন ॥২২॥

য়দ্যপি শুনিয়া প্রভুর কোমল হয় মন ।
তথাপি বাহিরে কহে নিষ্ঠুর বচন ॥ ২২ ॥

য়দ্যপি—यद्यपि; **শুনিয়া**—सुनकर; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **কোমল**—द्रवित; **হয়**—हो गया; **মন**—मन; **তথাপি**—फिर भी; **বাহিরে**—बाहर से; **কহে**—उन्होंने कहे; **নিষ্ঠুর বচন**—कठोर वचन।

अनुवाद

इतनी सारी बातें सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु का मन निश्चित रूप से द्रवित हुआ, किन्तु ऊपर से वे कुछ कठोर वचन कहना चाहते थे।

তোমা-সবার ইচ্ছা,——এই আমারে লঞা ।
রাজাকে মিলহ ইহঁ কটকেতে গিয়া ॥২৩॥

तोमा-सबार इच्छा,——एइ आमारे लञा ।
राजाके मिलह इहँ कटकेते गिया ॥ २३॥

तोमा-सबार—तुम सबकी; **इच्छा**—इच्छा; **एइ**—है; **आमारे लञा**—मुझे ले जाकर; **राजाके**—राजा को; **मिलह**—मिलने; **इहँ**—यहाँ; **कटकेते गिया**—कटक जाकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मैं समझता हूँ कि तुम सब राजा से भेंट कराने के लिए मुझे कटक ले जाना चाहते हो।"

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु स्वाभाविक रूप से दया के आगार हैं, अतएव ज्योंही उन्होंने राजा का वचन सुना, उनका हृदय तुरन्त पसीज उठा। इस तरह महाप्रभु राजा को मिलने कटक तक जाने को तैयार थे। उन्होंने इस बात को मन में आने तक नहीं दिया कि राजा कटक से चलकर उन्हें देखने जगन्नाथ पुरी आये। यह महत्त्वपूर्ण बात है कि श्री चैतन्य महाप्रभु इतने दयालु हैं कि वे राजा को मिलने कटक तक जाने को तैयार हो गये। स्पष्टत: ऐसी आशा नहीं की जाती थी कि राजा महाप्रभु से अपने स्थान पर मिलना चाहते थे, किन्तु ऊपर से अत्यन्त कठोर होने का प्रदर्शन करते हुए महाप्रभु ने संकेत किया कि यदि सारे भक्त ऐसा ही चाहते हैं, तो वे राजा को मिलने कटक जा सकते हैं।

পরমার্থ থাকুক——লোকে করিবে নিন্দন ।
লোকে রহু——দামোদর করিবে ভৎর্সন ॥২৪॥

परमार्थ थाकुक——लोके करिबे निन्दन ।
लोके रहु——दामोदर करिबे भर्त्सन ॥ २४॥

परम-अर्थ थाकुक—आध्यात्मिक उन्नति का क्या कहें; **लोके**—सामान्य लोग; **करिबे निन्दन**—निन्दा करेंगे; **लोके रहु**—सामान्य लोगों की क्या कहें; **दामोदर**—दामोदर पण्डित; **करिबे**—करेंगे; **भर्त्सन**—भर्त्सना।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने आगे कहा, "आध्यात्मिक प्रगति की बात तो

दूर रही, सारे लोग मेरी निन्दा करेंगे। सारे लोगों की बात जाने दें, दामोदर तक मेरी भर्त्सना करेगा।

তোমা-সবার আজ্ঞায় আমি না মিলি রাজারে ।
দামোদর কহে যবে, মিলি তবে তাঁরে ॥২৫॥

तोमा-सबार आज्ञाय आमि ना मिलि राजारे ।
दामोदर कहे ग्रबे, मिलि तबे ताँरे ॥ २५ ॥

तोमा-सबार—आप सबकी; **आज्ञाय**—आज्ञा से; **आमि**—मैं; **ना**—नहीं; **मिलि**—मिलूँगा; **राजारे**—राजा को; **दामोदर**—दामोदर पण्डित; **कहे**—कहे; **ग्रबे**—जब; **मिलि**—मैं मिलूँगा; **तबे**—तब; **ताँरे**—उसे।

अनुवाद

"मैं तुम सब भक्तों के अनुरोध से राजा से नहीं मिलूँगा, किन्तु यदि दामोदर कहेगा तो मैं ऐसा करूँगा।"

तात्पर्य

आध्यात्मिक दृष्टि से संन्यासी को किसी भौतिकतावादी व्यक्ति, विशेषतया रुपये-पैसों की लेनदेन में व्यस्त रहने वाले राजा से मिलना वर्जित है। एक संन्यासी तथा एक राजा के मिलन को निन्दनीय माना जाता है। संन्यासी सदैव जनता की आलोचना का लक्ष्य होता है और लोगों के द्वारा उसकी छोटी-से-छोटी त्रुटि को भी गम्भीर मानी जाती है। लोग संन्यासी से आशा करते हैं कि प्रचार के अतिरिक्त वह किसी सामाजिक या राजनीतिक मामले में भाग न ले। यदि संन्यासी जनता की आलोचना का लक्ष्य बनता है, तो उसका प्रचार-कार्य सफल नहीं होगा। श्री चैतन्य महाप्रभु ऐसी आलोचना से सदैव बचे रहना चाहते थे, जिससे उनके प्रचार-कार्य में बाधा न पड़े। सौभाग्यवश जब महाप्रभु अपने भक्तों से बातें कर रहे थे, तो उस समय दामोदर पण्डित भी उपस्थित थे। दामोदर पण्डित अत्यन्त श्रद्धालु भक्त तथा महाप्रभु के पक्के प्रेमी थे। जब भी कोई ऐसी बात होती, जिससे महाप्रभु के चरित्र पर दाग लग सके, तो वे तुरन्त इंगित करते थे और महाप्रभु के उच्च पद का भी ध्यान नहीं रखते थे। ऐसा कहा जाता है कि जिस बात में बुद्धिमान पुरुष अपने को संयमित रखते

हैं, वहाँ मूर्ख दौड़कर चले जाते हैं। श्री चैतन्य महाप्रभु दामोदर पण्डित द्वारा अपनी आलोचना किये जाने की मूर्खता का यहाँ संकेत करना चाहते थे। इसीलिए महाप्रभु ने अप्रत्यक्ष रूप में कहा कि यदि दामोदर पण्डित अनुमति दें, तो वे राजा को मिलने जा सकते हैं। इस कथन के पीछे गूढ़ार्थ भी है, क्योंकि इसमें चेतावनी है कि दामोदर को अब महाप्रभु की आलोचना करने की हिम्मत नहीं करनी चाहिए, क्योंकि भक्त के रूप में उनके लिए यह उचित नहीं था। श्री चैतन्य महाप्रभु अपने साथ रहने वाले सारे भक्तों के मार्गदर्शक तथा गुरु माने जाते थे। दामोदर पण्डित भी उन भक्तों में से एक थे और महाप्रभु ने उन्हें आगाह करके विशेष कृपा दिखलाई कि भविष्य में वे उनकी आलोचना न करें। भक्त या शिष्य को चाहिए कि वह कभी भी भगवान् या उनके प्रतिनिधि स्वरूप गुरु की आलोचना करने का प्रयास न करे।

দামোদর কহে,—তুমি স্বতন্ত্র ঈশ্বর ।
কর্তব্যাকর্তব্য সব তোমার গোচর ॥ ২৬ ॥

दामोदर कहे,—तुमि स्वतन्त्र ईश्वर ।
कर्तव्याकर्तव्य सब तोमार गोचर ॥ २६ ॥

दामोदर कहे—दामोदर पण्डित ने कहा; **तुमि**—आप; **स्वतन्त्र**—पूर्णरूपेण स्वतंत्र; **ईश्वर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **कर्तव्य**—करने योग्य; **अकर्तव्य**—करने योग्य नहीं; **सब**—सब; **तोमार**—आपके; **गोचर**—ज्ञान में है।

अनुवाद

दामोदर ने तुरन्त उत्तर दिया, "हे प्रभु, आप सर्वथा स्वतन्त्र पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं। चूँकि आप हर बात को जानते हैं, अतएव आपको पता है कि क्या करने योग्य है और क्या नहीं।

আমি কোন্‌ক্ষুদ্র-জীব, তোমাকে বিধি দিব? ।
আপনি মিলিবে তাঁরে, তাহাও দেখিব ॥ ২৭ ॥

आमि कोन्क्षुद्र-जीव, तोमाके विधि दिब? ।
आपनि मिलिबे ताँरे, ताहाओ देखिब ॥ २७ ॥

आमि कोन्—मैं तो मात्र; **क्षुद्र-जीव**—एक तुच्छ जीव; **तोमाके**—आपके लिए; **विधि**—निर्देश; **दिब**—मैं दूँगा; **आपनि**—आप; **मिलिबे**—मिलेंगे; **ताँरे**—राजा को; **ताहाओ देखिब**—मैं इसे देखूँगा।

अनुवाद

"मैं तो एक क्षुद्र जीव हूँ, अतएव मुझमें वह शक्ति कहाँ कि मैं आपको आदेश दूँ? आप स्वेच्छा से राजा से मिलेंगे और मैं देखूँगा।

राजा तोमारे स्नेह करे, तुमि—स्नेह-वश ।
ताँर स्नेहे कराबे ताँरे तोमार परश ॥२८॥

राजा तोमारे स्नेह करे, तुमि—स्नेह-वश ।
ताँर स्नेहे कराबे ताँरे तोमार परश ॥ २८ ॥

राजा—राजा; **तोमारे**—आपके साथ; **स्नेह करे**—प्रेम करता है; **तुमि**—आप; **स्नेह-वश**—प्रेम के वश में हैं; **ताँर**—उसके; **स्नेहे**—प्रेम से; **कराबे**—करोगे; **ताँरे**—उसको; **तोमार**—अपना; **परश**—स्पर्श।

अनुवाद

"राजा आप पर अत्यन्त अनुरक्त है और आप भी उसके प्रति स्नेह का अनुभव करते हैं। अतएव मैं समझ सकता हूँ कि आप राजा के स्नेह से वशीभूत होकर उनका स्पर्श करेंगे।

यद्यपि ईश्वर तुमि परम स्वतन्त्र ।
तथापि स्वभावे हओ प्रेम-परतन्त्र ॥२९॥

यद्यपि ईश्वर तुमि परम स्वतन्त्र ।
तथापि स्वभावे हओ प्रेम-परतन्त्र ॥ २९ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **ईश्वर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **तुमि**—आप; **परम**—पूरी तरह; **स्वतन्त्र**—स्वतंत्र; **तथापि**—फिर भी; **स्वभावे**—अपने स्वभाव से; **हओ**—आप हो जाते हैं; **प्रेम-परतन्त्र**—प्रेम के वश में।

अनुवाद

"यद्यपि आप पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं और पूर्णतया स्वतन्त्र हैं,

फिर भी आप अपने भक्तों के स्नेह एवं प्रेम के अधीन हो जाते हैं। यही आपका स्वभाव है।"

নিত্যানন্দ কহে—ঐছে হয় কোন্‌জন ।
যে তোমারে কহে, 'কর রাজ-দরশন' ॥৩০॥

নিত্যানন্দ কহে—ঐছে হয় কোন্‌জন ।
যে তোমারে কহে, 'কর রাজ-দরশন' ॥ ৩০ ॥

নিত্যানন্দ কহে—नित्यानन्द प्रभु ने कहा; **ঐছে**—ऐसा; **হয়**—है; **কোন্ জন**—कोई व्यक्ति; **যে**—जो; **তোমারে**—आपको; **কহে**—आज्ञा; **কর**—देता है; **রাজ-দরশন**—राजा को मिलने को।

अनुवाद

तब नित्यानन्द प्रभु ने कहा, "भला तीनों लोकों में ऐसा कौन-सा व्यक्ति है, जो आपसे कह सके कि आप राजा से मिलें?

কিন্তু অনুরাগী লোকের স্বভাব এক হয় ।
ইষ্ট না পাইলে নিজ প্রাণ সে ছাড়য় ॥৩১॥

কিন্তু অনুরাগী লোকের স্বভাব এক হয় ।
ইষ্ট না পাইলে নিজ প্রাণ সে ছাড়য় ॥ ৩১ ॥

কিন্তু—किन्तु; **অনুরাগী**—प्रेमी; **লোকের**—लोगों का; **স্বভাব**—स्वभाव; **এক**—एक; **হয়**—है; **ইষ্ট**—वांछित; **না পাইলে**—पाये बिना; **নিজ**—अपना; **প্রাণ**—जीवन; **সে**—वह; **ছাড়য়**—त्याग देता है।

अनुवाद

"फिर भी यदि अनुरक्त व्यक्ति को अपनी वांछित वस्तु प्राप्त न हो पाये, तो क्या यह उसका स्वभाव नहीं है कि वह अपना जीवन त्याग दे?

যাজ্ঞিক-ব্রাহ্মণী সব তাহাতে প্রমাণ ।
কৃষ্ণ লাগি' পতি-আগে ছাড়িলেক প্রাণ ॥৩২॥

যাজ্ঞিক-ব্রাহ্মণী সব তাহাতে প্রমাণ ।
কৃষ্ণ লাগি' পতি-আগে ছাড়িলেক প্রাণ ॥ ৩২ ॥

याज्ञिक-ब्राह्मणी—उन ब्राह्मणों की पत्नियाँ जो यज्ञ कर रहे थे; **सब**—सब; **ताहाते**—उस सम्बन्ध में; **प्रमाण**—प्रमाण; **कृष्ण लागि'**—कृष्ण के लिए; **पति-आगे**—अपने पतियों के सामने; **छाड़िलेक प्राण**—अपने प्राण त्याग दिये।

अनुवाद

"उदाहरणार्थ, यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों की कुछ पत्नियों ने कृष्ण के लिए अपने पतियों के समक्ष अपने प्राण त्याग दिये।"

तात्पर्य

यह उस घटना का वर्णन है, जब मथुरा के निकट चरागाह में श्रीकृष्ण तथा उनके ग्वालमित्र अपने पशुओं के झुंड के साथ उपस्थित थे। उस समय ग्वालों को भूख लग गई तो उन्होंने भोजन के लिए प्रार्थना की। इस पर भगवान् कृष्ण ने उनसे कहा कि वे पास में ही यज्ञ में संलग्न ब्राह्मणों के पास जायें और यज्ञ में से कुछ भोजन ले आयें। भगवान् का आदेश पाकर सारे ग्वालबाल ब्राह्मणों के पास गये और उनसे भोजन माँगा, किन्तु उन्होंने मना कर दिया। इसके बाद ग्वालबालों ने ब्राह्मणों की पत्नियों से भोजन माँगा। ये सारी पत्नियाँ भगवान् के रागानुग प्रेम में अनुरक्त थीं, अतएव ज्योंही उन्होंने ग्वालबालों की प्रार्थना सुनी और यह समझ गईं कि कृष्ण को भोजन चाहिए, तो वे तुरन्त ही यज्ञ-स्थान छोड़कर चली गईं। इस पर उनके पतियों ने उनकी बहुत भर्त्सना की। फलस्वरूप वे अपना प्राण त्यागने पर तुल गईं। शुद्ध भक्त भगवान् की दिव्य प्रेममयी सेवा के लिए अपना जीवन त्याग करने के लिए उद्यत हो जाता है, क्योंकि यही उसका स्वभाव है।

এক যুক্তি আছে, যদি কর অবধান ।
তুমি না মিলিলেহ তাঁরে, রহে তাঁর প্রাণ ॥৩৩॥

एक युक्ति आछे, यदि कर अवधान ।
तुमि ना मिलिलेह ताँरे, रहे ताँर प्राण ॥ ३३ ॥

एक युक्ति—एक तरकीब; **आछे**—है; **यदि**—यदि; **कर अवधान**—आप विचार करें; **तुमि**—आप; **ना मिलिलेह**—न मिलें; **ताँरे**—उनसे; **रहे**—रह जाता है; **ताँर**—उसका; **प्राण**—जीवन।

अनुवाद

तब नित्यानन्द प्रभु ने महाप्रभु के विचारार्थ एक सुझाव रखा। उन्होंने कहा, "ऐसी एक युक्ति है, जिससे आपको राजा से मिलने की आवश्यकता नहीं रह जायेगी, किन्तु उससे राजा के प्राण बच जायेंगे।

एक बहिर्वास यदि देह' कृपा करि' ।
ताहा पाञा प्राण राखे तोमार आशा धरि' ॥३४॥

एक बहिर्वास यदि देह' कृपा करि' ।
ताहा पाञा प्राण राखे तोमार आशा धरि' ॥ ३४॥

एक बहिर्वास—एक बाह्य वस्त्र; **यदि**—यदि; **देह'**—आप दें; **कृपा करि'**—कृपा करके; **ताहा पाञा**—उसे पाकर; **प्राण राखे**—वह जीवित रहेगा; **तोमार आशा धरि'**—आपसे भविष्य में किसी समय मिलने की आशा करके।

अनुवाद

"यदि आप कृपा करके अपना एक उत्तरीय वस्त्र राजा को भेज दें, तो वह किसी न किसी समय आपके दर्शन होने की आशा में जीवित बना रहेगा।"

तात्पर्य

इस प्रकार श्री नित्यानन्द प्रभु ने बड़ी ही युक्ति से यह सुझाव रखा कि श्री चैतन्य महाप्रभु अपना कोई पुराना वस्त्र राजा को दे दें। यद्यपि राजा महाप्रभु से मिल नहीं पाएगा, किन्तु ऐसा वस्त्र पाकर उसे सान्त्वना मिल जायेगी। यद्यपि राजा महाप्रभु का दर्शन करने के लिए अत्यधिक उत्सुक था, किन्तु महाप्रभु के लिए उससे मिलना सम्भव नहीं था। अत: इस स्थिति को सुलझाने के लिए ही नित्यान्द प्रभु ने सुझाव रखा कि महाप्रभु राजा के पास अपना कोई पुराना वस्त्र भेज दें। इस तरह राजा सोचेगा कि महाप्रभु उस पर कृपा प्रदर्शित कर रहे हैं। तब राजा ऐसा कोई उग्र कार्य नहीं करेगा, जैसाकि प्राण त्यागना या भिक्षुक बनना।

प्रभु कहे,—तुमि-सब परम विद्वान् ।
येइ भाल हय, सेइ कर समाधान ॥३५॥

प्रभु कहे,—तुमि-सब परम विद्वान् ।
येइ भाल हय, सेइ कर समाधान ॥ ३५ ॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **तुमि-सब**—तुम सब; **परम विद्वान्**—परम विद्वान हो; **येइ**—जो कुछ; **भाल हय**—भला है; **सेइ**—वह; **कर समाधान**—करो।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "चूँकि आप लोग सभी परम विद्वान हैं, अतएव आप लोग जो भी निर्णय लेंगे वह मुझे स्वीकार्य होगा।"

তবে নিত্যানন্দ-গোসাঞি গোবিন্দের পাশ ।
মাগিয়া লইল প্রভুর এক বহির্বাস ॥ ৩৬ ॥

तबे नित्यानन्द-गोसाञि गोविन्देर पाश ।
मागिया लइल प्रभुर एक बहिर्वास ॥ ३६ ॥

तबे—उस समय; **नित्यानन्द-गोसाञि**—नित्यानन्द प्रभु; **गोविन्देर पाश**—श्री चैतन्य महाप्रभु के निजी सेवक गोविन्द से; **मागिया**—अनुरोध करके; **लइल**—लिया; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **एक**—एक; **बहिर्वास**—बाह्य वस्त्र।

अनुवाद

तब नित्यानन्द प्रभु ने गोविन्द से कहकर महाप्रभु का पहना हुआ एक बाह्य वस्त्र प्राप्त कर लिया।

সেই বহির্বাস সার্বভৌম-পাশ দিল ।
সার্বভৌম সেই বস্ত্র রাজারে পাঠা'ল ॥ ৩৭ ॥

सेइ बहिर्वास सार्वभौम-पाश दिल ।
सार्वभौम सेइ वस्त्र राजारे पाठा'ल ॥ ३७ ॥

सेइ—वह; **बहिर्वास**—बाह्य वस्त्र; **सार्वभौम-पाश**—सार्वभौम भट्टाचार्य को; **दिल**—दिया; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य ने; **सेइ**—वह; **वस्त्र**—वस्त्र; **राजारे**—राजा को; **पाठा'ल**—भेज दिया।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु ने वह पुराना वस्त्र सार्वभौम भट्टाचार्य को दे दिया और सार्वभौम भट्टाचार्य ने उसे राजा के पास भेज दिया।

বস্ত্র পাঞা রাজার হৈল আনন্দিত মন ।
প্রভু-রূপ করি' করে বস্ত্রের পূজন ॥৩৮॥
वस्त्र पाञा राजार हैल आनन्दित मन ।
प्रभु-रूप करि' करे वस्त्रेर पूजन ॥ ३८ ॥

वस्त्र पाञा—वह वस्त्र पाकर; **राजार**—राजा का; **हैल**—हो गया; **आनन्दित मन**—प्रसन्न मन; **प्रभु-रूप करि'**—उसे श्री चैतन्य महाप्रभु जैसा स्वयं जानकर; **करे**—की; **वस्त्रेर**—वस्त्र की; **पूजन**—पूजा।

अनुवाद

जब राजा को वह पुराना वस्त्र मिल गया, तो उन्होंने उसकी वैसी ही पूजा शुरू कर दी, जैसे वे साक्षात् महाप्रभु की पूजा करते।

तात्पर्य

यही वैदिक आदेशों का भी निर्णय है। चूँकि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् परम सत्य हैं, अतएव उनसे सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु भी समान पद को प्राप्त रहती है। चूँकि राजा को श्री चैतन्य महाप्रभु से अत्यन्त स्नेह था और उन्होंने महाप्रभु का दर्शन किये बिना ही भक्ति का सार आत्मसात् कर लिया था। अतएव ज्योंही उन्हें सार्वभौम भट्टाचार्य से वस्त्र प्राप्त हुआ, उन्होंने इस वस्त्र को श्री चैतन्य महाप्रभु मानकर उसकी पूजा प्रारम्भ कर दी। महाप्रभु के वस्त्र, बिस्तर तथा उनके खड़ाऊँ तथा अन्य सारी आवश्यक वस्तुएँ श्री बलदेव के अंश शेष-रूपी विष्णु की रूपान्तर हैं। अतएव पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के वस्त्र तथा साज-सामान भगवान् के ही अन्य रूप होते हैं। भगवान् से सम्बन्धित हर वस्तु पूजनीय होती है। श्री चैतन्य महाप्रभु का हमें उपदेश है कि जिस प्रकार कृष्ण पूजनीय हैं, उसी तरह उनका धाम वृन्दावन भी पूजनीय है। और जिस तरह वृन्दावन पूजनीय है, उसी तरह वृन्दावन की सारी वस्तुएँ—वृक्ष, मार्ग, नदी इत्यादि भी पूजनीय हैं। अतएव शुद्ध भक्त गाता है—*जय जय वृन्दावनवासी यत जन*—अर्थात् "वृन्दावन के सारे निवासियों की जय हो।" यदि भक्त में पक्की भक्तिमयी प्रवृत्ति होती है, तो ये सारे निर्णय उसके अन्तःकरण में जाग्रत हो जायेंगे या प्रकट हो जायेंगे :

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ॥

"जिन महात्माओं की भगवान् तथा गुरु दोनों में दृढ़ श्रद्धा होती है, उन्हें ही वैदिक ज्ञान का पूर्ण सार स्वतः अनुभव होता है।" (*श्वेताश्वतर उपनिषद्* ६.२३)

इस तरह महाराज प्रतापरुद्र तथा अन्य भक्तों के चरणचिह्नों का अनुसरण करते हुए हमें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की प्रत्येक वस्तु की पूजा करना सीखना चाहिए। शिवजी ने *तदीयानाम्* कहकर इस ओर इंगित किया है। *पद्म पुराण* में कहा गया है :

आराधनानां सर्वेषां विष्णोराराधनं परम्।
तस्मात् परतरं देवि तदीयानां समर्चनम्॥

"हे देवी, समस्त पूजा-विधियों में विष्णु-पूजा सर्वश्रेष्ठ है। उससे भी महान् है *तदीय* अर्थात् विष्णु से सम्बन्धित किसी भी वस्तु की पूजा।" श्री विष्णु सच्चिदानन्द विग्रह हैं। इसी तरह कृष्ण का सर्वाधिक विश्वासपात्र दास अर्थात् गुरु तथा विष्णु के सारे भक्त *तदीय* हैं। सच्चिदानन्द-विग्रह, गुरु, वैष्णव तथा उनके द्वारा उपयोग की गई कोई भी वस्तु *तदीय* है और निस्सन्देह, सभी जीवों द्वारा आराध्य मानी जानी चाहिए।

রামানন্দ রায় যবে 'দক্ষিণ' হৈতে আইলা ।
প্রভু-সঙ্গে রহিতে রাজাকে নিবেদিলা ॥৩৯॥

रामानन्द राय ग्रबे 'दक्षिण' हैते आइला ।
प्रभु-सङ्गे रहिते राजाके निवेदिला ॥ ३९ ॥

रामानन्द राय—रामानन्द राय; **ग्रबे**—जब; **दक्षिण**—दक्षिण भारत; **हैते**—से; **आइला**—लौटे; **प्रभु-सङ्गे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ; **रहिते**—रहने के लिए; **राजाके**—राजा को; **निवेदिला**—निवेदन किया।

अनुवाद

दक्षिण भारत से अपनी नौकरी छोड़कर लौटने के बाद रामानन्द राय ने राजा से प्रार्थना की कि वे उन्हें श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ रहने की अनुमति दे दें।

তবে রাজা সন্তোষে তাঁহারে আজ্ঞা দিলা ।
আপনি মিলন লাগি' সাধিতে লাগিলা ॥৪০॥

तबे राजा सन्तोषे ताँहारे आज्ञा दिला ।
आपनि मिलन लागि' साधिते लागिला ॥ ४० ॥

तबे—उस समय; **राजा**—राजा ने; **सन्तोषे**—अत्यन्त सन्तुष्ट होकर; **ताँहारे**—रामानन्द राय को; **आज्ञा दिला**—आज्ञा दी; **आपनि**—स्वयं; **मिलन लागि'**—मिलने के लिए; **साधिते लागिला**—व्यवस्था करने लगे।

अनुवाद

जब रामानन्द राय ने महाप्रभु के साथ ठहरने के लिए राजा से अनुमति माँगी, तो राजा ने बड़े ही सन्तोष के साथ तुरन्त ही उन्हें अनुमति दे दी। और राजा ने महाप्रभु से अपने मिलाप की व्यवस्था के लिए रामानन्द राय से अनुरोध करना प्रारम्भ कर दिया।

महाप्रभु महा-कृपा करेन तोमारे ।
मोरे मिलिबारे अवश्य साधिबे ताँहारे ॥ ४१ ॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **महा-कृपा**—महान् कृपा; **करेन**—की; **तोमारे**—आप पर; **मोरे**—मुझे; **मिलिबारे**—मिलने के लिए; **अवश्य**—अवश्य; **साधिबे**—आपको व्यवस्था करनी चाहिए; **ताँहारे**—उनको।

अनुवाद

राजा ने रामानन्द राय से कहा, "श्री चैतन्य महाप्रभु आप पर अत्यन्त कृपालु हैं। अतएव आप मेरी भेंट के लिए उनसे अवश्य अनुरोध करें।"

एक-सङ्गे दुइ जन क्षेत्रे यबे आइला ।
रामानन्द राय तबे प्रभुरे मिलिला ॥ ४२ ॥

एक-सङ्गे—इकट्ठे; **दुइ जन**—ये दो व्यक्ति; **क्षेत्रे**—जगन्नाथ पुरी में; **यबे**—जब; **आइला**—लौटे; **रामानन्द राय**—रामानन्द राय; **तबे**—उस समय; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु से; **मिलिला**—मिले।

अनुवाद

राजा तथा रामानन्द राय साथ-साथ जगन्नाथ-क्षेत्र (पुरी) लौटे और तब श्री रामानन्द राय श्री चैतन्य महाप्रभु से मिले।

प्रभु-पदे प्रेम-भक्ति जानाइल राजार ।
प्रसङ्ग पाञा ऐछे कहे बार-बार ॥ ४३ ॥

प्रभु-पदे प्रेम-भक्ति जानाइल राजार ।
प्रसङ्ग पाञा ऐछे कहे बार-बार ॥ ४३ ॥

प्रभु-पदे—महाप्रभु के चरणकमलों पर; **प्रेम-भक्ति**—प्रेमभाव; **जानाइल**—सूचित किया; **राजार**—राजा का; **प्रसङ्ग**—चर्चा; **पाञा**—पाकर; **ऐछे**—इस प्रकार; **कहे**—कहा; **बार-बार**—बारम्बार।

अनुवाद

उस समय रामानन्द राय ने श्री चैतन्य महाप्रभु से राजा के प्रेमभाव के बारे में बतलाया। जब भी कोई अवसर मिलता, तो वे महाप्रभु को राजा के बारे में बारम्बार बतलाते।

राज-मन्त्री रामानन्द——व्यवहारे निपुण ।
राज-प्रीति कहि' द्रवाइल प्रभुर मन ॥ ४४ ॥

राज-मन्त्री रामानन्द——व्यवहारे निपुण ।
राज-प्रीति कहि' द्रवाइल प्रभुर मन ॥ ४४ ॥

राज-मन्त्री—राजमंत्री; **रामानन्द**—श्री रामानन्द राय; **व्यवहारे**—सामान्य व्यवहार में; **निपुण**—अत्यन्त दक्ष; **राज-प्रीति**—चैतन्य महाप्रभु के प्रति राजा का प्रेम; **कहि'**—वर्णन करके; **द्रवाइल**—पिघला दिया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **मन**—मन।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय निस्सन्देह राजा के नीतिनिपुण मन्त्री थे। वे सामान्य व्यवहार में अत्यन्त निपुण थे। उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु से राजा के प्रेम का वर्णन कर-करके महाप्रभु के मन को द्रवित कर दिया।

तात्पर्य

भौतिक जगत् में नीतिज्ञ व्यक्ति, लोगों से विशेषतया राजनैतिक मामलों

के विषय में निपटना जानता है। महाप्रभु के कुछ बड़े-बड़े भक्त, यथा रामानन्द राय, रघुनाथ दास गोस्वामी, सनातन गोस्वामी तथा रूप गोस्वामी सरकारी अफसर थे और उनका गृहस्थ जीवन अत्यन्त ऐश्वर्यपूर्ण था। फलस्वरूप वे जानते थे कि लोगों के साथ व्यवहार किस तरह किया जाये। कई मामलों में हमने रूप गोस्वामी, रघुनाथ दास गोस्वामी और रामानन्द राय की निपुणता महाप्रभु की सेवा में देखी है। जब रघुनाथ दास गोस्वामी के पिता तथा चाचा को सरकारी कर्मचारी बन्दी बनाने वाले थे, तो रघुनाथ दास गोस्वामी ने उन्हें छिपा लिया और सरकारी अफसरों से स्वयं मिलकर बड़े ही ढंग से सारा मामला सुलझा दिया। यह तो केवल एक उदाहरण है। इसी तरह सनातन गोस्वामी को अपना मन्त्री-पद त्यागने पर कारागार में डाल दिया गया, किन्तु उन्होंने कारागार के सेवक को घूस देकर बड़ी ही युक्ति से अपने आपको नवाब के चंगुल से छुड़ाया, जिससे वे श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ रह सकें। यहाँ हम महाप्रभु के अत्यन्त विश्वस्त भक्त रामानन्द राय को श्री चैतन्य महाप्रभु के हृदय को बड़ी ही युक्ति के साथ द्रवित करते देखते हैं, यद्यपि महाप्रभु ने राजा से मिलने से इनकार करने का निर्णय ले रखा था। रामानन्द राय की नीति तथा सार्वभौम भट्टाचार्य तथा अन्य महान् भक्तों के अनुनय-विनय से ही सफलता प्राप्त हो सकी। निष्कर्ष यह है कि भगवान् की सेवा में की जाने वाली राजनीति भी भक्ति का एक रूप है।

उत्कण्ठाते प्रतापरुद्र नारे रहिवारे ।
रामानन्द साधिलेन प्रभुरे मिलिवारे ॥ ४५ ॥

उत्कण्ठाते प्रतापरुद्र नारे रहिबारे ।
रामानन्द साधिलेन प्रभुरे मिलिबारे ॥ ४५ ॥

उत्कण्ठाते—अत्यन्त उत्सुकता में; **प्रतापरुद्र**—राजा प्रतापरुद्र; **नारे रहिबारे**—रह न सके; **रामानन्द**—श्री रामानन्द राय; **साधिलेन**—मना लिया; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **मिलिबारे**—मिलने के लिए।

अनुवाद

चूँकि महाराज प्रतापरुद्र महाप्रभु का दर्शन न पा सकने के कारण अत्यन्त उत्कंठित थे और वे इसे सहन नहीं कर पा रहे थे, अतएव श्री

रामानन्द राय ने निपुणता से राजा के साथ महाप्रभु की भेंट कराने की व्यवस्था की।

রামানন্দ প্রভু-পায় কৈল নিবেদন ।
এক-বার প্রতাপরুদ্রে দেখাহ চরণ ॥৪৬॥

रामानन्द प्रभु-पाय कैल निवेदन ।
एक-बार प्रतापरुद्रे देखाह चरण ॥ ४६ ॥

रामानन्द—रामानन्द ने; **प्रभु-पाय**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर; **कैल**—किया; **निवेदन**—निवेदन; **एक-बार**—मात्र एक बार; **प्रतापरुद्रे**—महाराज प्रतापरुद्र को; **देखाह**—दिखा दो; **चरण**—अपने चरणकमल।

अनुवाद

रामानन्द राय ने श्री चैतन्य महाप्रभु से खुलकर यह निवेदन किया, "कृपा करके कम-से-कम एक बार तो राजा को अपने चरणकमलों का दर्शन करने दें।"

প্রভু কহে,—রামানন্দ, কহ বিচারিয়া ।
রাজাকে মিলিতে যুয়ায় সন্ন্যাসী হঞা? ॥৪৭॥

प्रभु कहे,—रामानन्द, कह विचारिया ।
राजाके मिलिते युयाय सन्न्यासी हञा? ॥ ४७ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **रामानन्द**—मेरे प्रिय रामानन्द; **कह**—कृपया मुझे कहो; **विचारिया**—उचित विचार करके; **राजाके**—राजा को; **मिलिते**—मिलना; **युयाय**—क्या यह उचित है; **सन्न्यासी**—संन्यासी; **हञा**—होकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "हे रामानन्द, संन्यासी को राजा से मिलना उचित होगा या नहीं, यह विचार करने के बाद ही तुम्हें मुझसे अनुरोध करना चाहिए।

রাজার মিলনে ভিক্ষুকের দুই লোক নাশ ।
পরলোক রহু, লোকে করে উপহাস ॥৪৮॥

राजार मिलने भिक्षुकेर दुइ लोक नाश ।
परलोक रहु, लोके करे उपहास ॥ ४८ ॥

राजार मिलने—राजा से मिलने पर; **भिक्षुकेर**—साधु (संन्यासी) का; **दुइ लोक**—दोनों लोक; **नाश**—नष्ट; **पर-लोक**—आध्यात्मिक लोक; **रहु**—छोड़ दो; **लोके**—इस भौतिक जगत् में ; **करे**—करेंगे; **उपहास**—उपहास।

अनुवाद

"यदि कोई संन्यासी राजा से भेंट करता है, तो उसके लिए यह लोक तथा परलोक दोनों नष्ट हो जायेंगे। हाँ, परलोक के बारे में अभी से क्या कहा जाये। इसी लोक में लोग हँसी उड़ायेंगे, यदि संन्यासी राजा से भेंट करे।"

रामानन्द कहे,—तुमि ईश्वर स्वतन्त्र ।
कारे तोमार भय, तुमि नह परतन्त्र ॥ ४९ ॥
रामानन्द कहे,—तुमि ईश्वर स्वतन्त्र ।
कारे तोमार भय, तुमि नह परतन्त्र ॥ ४९ ॥

रामानन्द कहे—रामानन्द राय ने कहा; **तुमि**—आप; **ईश्वर**—पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान्; **स्वतन्त्र**—स्वतंत्र; **कारे तोमार भय**—आप किसी से भयभीत क्यों हैं ?; **तुमि नह**—आप नहीं हैं; **पर-तन्त्र**—परतंत्र।

अनुवाद

रामानन्द राय ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, आप तो परम स्वतन्त्र हैं। आपको किसी से कोई डर नहीं है, क्योंकि आप किसी पर आश्रित नहीं हैं।"

प्रभु कहे,—आमि मनुष्य आश्रमे सन्न्यासी ।
काय-मनो-वाक्ये व्यवहारे भय वासि ॥ ५० ॥
प्रभु कहे,—आमि मनुष्य आश्रमे सन्न्यासी ।
काय-मनो-वाक्ये व्यवहारे भय वासि ॥ ५० ॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **आमि मनुष्य**—मैं मनुष्य हूँ; **आश्रमे**—आश्रम में;

सन्न्यासी—संन्यासी; **काय-मनः-वाक्ये**—अपने तन, मन और वाणी सहित; **व्यवहारे**—सामान्य व्यवहार में; **भय**—भय; **वासि**—मैं करता हूँ।

अनुवाद

जब रामानन्द राय ने महाप्रभु को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कहकर सम्बोधित किया, तो महाप्रभु ने यह कहकर आपत्ति की, "मैं परमेश्वर नहीं, अपितु एक सामान्य मनुष्य हूँ। इसलिए मुझे जनता के मत से तीन प्रकार से डरना चाहिए—अपने शरीर, मन तथा शब्दों से।

शुक्ल-वस्त्रे मसि-विन्दु यैछे ना लुकाय ।
सन्न्यासीर अल्प छिद्र सर्व-लोके गाय ॥५१॥

शुक्ल-वस्त्रे मसि-बिन्दु यैछे ना लुकाय ।
सन्न्यासीर अल्प छिद्र सर्व-लोके गाय ॥५१॥

शुक्ल-वस्त्रे—सफेद वस्त्रों में; **मसि-बिन्दु**—स्याही का दाग; **यैछे**—जैसे; **ना**—नहीं; **लुकाय**—छुपता; **सन्न्यासीर**—संन्यासी का; **अल्प**—थोड़ा सा; **छिद्र**—दोष; **सर्व-लोके**—सामान्य जनता को; **गाय**—प्रकाशित हो जाता है।

अनुवाद

"जनता को जैसे ही किसी संन्यासी के आचरण में थोड़ा भी दोष दिख जाता है, तो वह उसे जंगल की आग की तरह विज्ञापित करती है। सफेद वस्त्र पर स्याही का काला धब्बा छिपाये नहीं छिपता। वह सदैव स्पष्ट दिखता रहता है।"

राय कहे,—कत पापीर करियाछ अव्याहति ।
ईश्वर-सेवक तोमार भक्त गजपति ॥५२॥

राय कहे,—कत पापीर करियाछ अव्याहति ।
ईश्वर-सेवक तोमार भक्त गजपति ॥५२॥

राय कहे—रामानन्द राय ने उत्तर दिया; **कत पापीर**—असंख्य पापियों का; **करियाछ**—आपने किया है; **अव्याहति**—उद्धार; **ईश्वर-सेवक**—भगवान् का सेवक; **तोमार**—आपका; **भक्त**—भक्त; **गजपति**—राजा।

अनुवाद

रामानन्द ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, आपने अनेकों पापी पुरुषों का उद्धार किया है। यह उड़ीसा का राजा, प्रतापरुद्र वास्तव में भगवान् का सेवक और आपका भक्त है।"

प्रभु कहे,—पूर्ण यैछे दुग्धेर कलस ।
सुरा-बिन्दु-पाते केह ना करे परश ॥५३॥

प्रभु कहे,—पूर्ण ग्रैछे दुग्धेर कलस ।
सुरा-बिन्दु-पाते केह ना करे परश ॥५३॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **पूर्ण**—पूर्णतया भरा हुआ; **ग्रैछे**—जैसे; **दुग्धेर**—दूध का; **कलस**—घड़ा; **सुरा-बिन्दु-पाते**—शराब की मात्र एक बूँद से; **केह**—कोई; **ना करे**—नहीं करता; **परश**—स्पर्श।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "भले ही किसी बड़े पात्र में कितना अधिक दूध क्यों न हो, किन्तु यदि इसमें शराब की एक भी बूँद गिर जाती है, तो वह अस्पृश्य हो जाता है।

यद्यपि प्रतापरुद्र—सर्व-गुणवान् ।
ताँहारे मलिन कैल एक 'राजा'-नाम ॥५४॥

यद्यपि प्रतापरुद्र—सर्व-गुणवान् ।
ताँहारे मलिन कैल एक 'राजा'-नाम ॥५४॥

यद्यपि—यद्यपि; **प्रतापरुद्र**—राजा प्रतापरुद्र; **सर्व-गुण-वान्**—हर प्रकार से गुणवान; **ताँहारे**—उसको; **मलिन कैल**—अशुद्ध बना देता है; **एक**—एक; **राजा-नाम**—"राजा" का नाम।

अनुवाद

"यद्यपि राजा समस्त सद्गुणों से सम्पन्न है, किन्तु उसके नाम के साथ 'राजा' पदवी लगी रहने से प्रत्येक वस्तु दूषित हो चुकी है।

तथापि तोमार यदि महाग्रह हय ।
तबे आनि' मिलाह तुमि ताँहार तनय ॥५५॥

तथापि तोमार यदि महाग्रह हय ।
तबे आनि' मिलाह तुमि ताँहार तनय ॥५५॥

तथापि—फिर भी; **तोमार**—आपकी; **यदि**—यदि; **महा-आग्रह**—महान् उत्सुकता; **हय**—हो; **तबे**—तो; **आनि'**—लाकर; **मिलाह**—मिलाओ; **तुमि**—आप; **ताँहार**—उसके; **तनय**—पुत्र को।

अनुवाद

"किन्तु इतने पर भी यदि तुम अत्यधिक इच्छुक हो कि राजा मुझसे भेंट करे, तो सर्वप्रथम उसके पुत्र को लाकर मुझसे मिलाओ।

"आत्मा वै जायते पुत्रः"—एइ शास्त्र-वाणी ।
पुत्रेर मिलने येन मिलिबे आपनि ॥५६॥

"आत्मा वै जायते पुत्रः"—एइ शास्त्र-वाणी ।
पुत्रेर मिलने येन मिलिबे आपनि ॥५६॥

आत्मा वै जायते पुत्रः—पिता पुत्र जैसा होता है; **एइ**—यह; **शास्त्र-वाणी**—शास्त्र-वाणी; **पुत्रेर मिलने**—पुत्र से मिलने पर; **येन**—जैसे; **मिलिबे**—वह मिल जायेगा; **आपनि**—स्वयं।

अनुवाद

"शास्त्रों में इंगित किया गया है कि पुत्र पिता का प्रतिनिधित्व करता है, अतएव उसके पुत्र की भेंट मेरे साथ उसके पिता की भेंट के तुल्य होगी।"

तात्पर्य

श्रीमद्भागवत (१०.७८.३६) में कहा गया है—*आत्मा वै पुत्र उत्पन्न इति वेदानुशासनम्।* वेदों का मत है कि मनुष्य अपने पुत्र के रूप में उत्पन्न होता है। पुत्र पिता से अभिन्न होता है और प्रत्येक शास्त्र में इसे स्वीकार किया गया है। ईसाई धर्म में ऐसा विश्वास किया जाता है कि ईश्वर-पुत्र ईसा भी ईश्वर हैं। दोनों अभिन्न हैं।

तबे राय याइ' सब राजारे कहिला ।
प्रभुर आज्ञाय ताँर पुत्र लञा आइला ॥५७॥

तबे राय याइ' सब राजारे कहिला ।
प्रभुर आज्ञाय ताँर पुत्र लञा आइला ॥५७॥

तबे—तत्पश्चात्; **राय**—रामानन्द राय ने; **याइ'**—जाकर; **सब**—सब कुछ; **राजारे**—राजा को; **कहिला**—सूचित किया; **प्रभुर आज्ञाय**—महाप्रभु की आज्ञा से; **ताँर पुत्र**—उसका पुत्र; **लञा आइला**—वे अपने साथ ले आये।

अनुवाद

तब रामानन्द राय राजा के पास महाप्रभु के साथ हुई अपनी बातचीत से अवगत कराने गये और महाप्रभु की आज्ञा के अनुसार वे राजा के पुत्र को उनसे मिलाने के लिए अपने साथ लेते आये।

सुन्दर, राजार पुत्र——श्यामल-वरण ।
किशोर वयस, दीर्घ कमल-नयन ॥५८॥

सुन्दर, राजार पुत्र——श्यामल-वरण ।
किशोर वयस, दीर्घ कमल-नयन ॥५८॥

सुन्दर—सुन्दर; **राजार पुत्र**—राजा का पुत्र; **श्यामल-वरण**—श्यामल वर्ण का; **किशोर वयस**—किशोर अवस्था; **दीर्घ**—बड़े; **कमल-नयन**—कमल जैसे नेत्र।

अनुवाद

राजकुमार नवयौवन अवस्था होने के कारण अत्यन्त सुन्दर था। उसका रंग साँवला था और कमल जैसी बड़ी-बड़ी आँखें थीं।

पीताम्बर, धरे अङ्गे रत्न-आभरण ।
श्री-कृष्ण-स्मरणे तेंह हैला 'उद्दीपन' ॥५९॥

पीताम्बर, धरे अङ्गे रत्न-आभरण ।
श्री-कृष्ण-स्मरणे तेंह हैला 'उद्दीपन' ॥५९॥

पीत-अम्बर—पीले वस्त्र; **धरे**—धारण किये हुए; **अङ्गे**—शरीर पर; **रत्न-आभरण**—रत्न-जड़ित आभूषण; **श्री-कृष्ण-स्मरणे**—श्रीकृष्ण का स्मरण करने की; **तेंह**—वह; **हैला**—था; **उद्दीपन**—प्रेरणा।

अनुवाद

राजकुमार पीला वस्त्र पहने था और रत्न के आभूषणों से उसका शरीर अलंकृत था। अतएव जो भी उसे देखता, उसे भगवान् कृष्ण का स्मरण हो आता।

তাঁরে দেখি, মহাপ্রভুর কৃষ্ণ-স্মৃতি হৈল ।
প্রেমাবেশে তাঁরে মিলি' কহিতে লাগিল ॥৬০॥

তাঁরে দেখি, মহাপ্রভুর কৃষ্ণ-স্মৃতি হৈল ।
প্রেমাবেশে তাঁরে মিলি' কহিতে লাগিল ॥৬০॥

তাঁরে দেখি—उसको देखकर; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **कृष्ण-स्मृति**—कृष्ण का स्मरण; **हैल**—हो आया; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **ताँरे**—उसे; **मिलि'**—मिलकर; **कहिते लागिल**—कहने लगे।

अनुवाद

राजकुमार को देखते ही श्री चैतन्य महाप्रभु को कृष्ण का स्मरण हो आया। अतः महाप्रभु उससे प्रेमावेश में मिलते हुए कहने लगे।

এই—মহা-ভাগবত, যাঁহার দর্শনে ।
ব্রজেন্দ্র-নন্দন-স্মৃতি হয় সর্ব-জনে ॥৬১॥

এই—মহা-ভাগবত, যাঁহার দর্শনে ।
ব্রজেন্দ্র-নন্দন-স্মৃতি হয় সর্ব-জনে ॥৬১॥

एइ—यहाँ है; **महा-भागवत**—प्रथम श्रेणी का भक्त; **याँहार दर्शने**—जिसके दर्शन से; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—व्रजराज के पुत्र का; **स्मृति**—स्मरण; **हय**—होता है; **सर्व-जने**—प्रत्येक व्यक्ति को।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "यहाँ है महान् भक्त। इसे देखकर किसी भी व्यक्ति को नन्द महाराज के पुत्र भगवान् कृष्ण की याद आ जायेगी।"

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने अपने *अनुभाष्य* में लिखा है कि भौतिकतावादी व्यक्ति भ्रमवश शरीर तथा मन को भौतिक सुख का साधन मान

बैठता है। दूसरे शब्दों में, भौतिकतावादी देहात्मभाव को स्वीकार करता है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने महाराज प्रतापरुद्र के पुत्र को भौतिकतावादी का पुत्र होने के कारण उसे भौतिकतावादी के रूप में नहीं लिया। न ही उन्होंने अपने आपको भोक्ता माना। मायावादी दार्शनिक सबसे बड़ी भूल यही करते हैं कि वे *सच्चिदानन्द-विग्रह* अर्थात् भगवान् के दिव्य रूप को भौतिक शरीर के समान मान बैठते हैं। किन्तु दिव्यता में कोई भौतिक कल्मष नहीं होता, न ही भौतिक पदार्थ में आध्यात्मिकता की कल्पना करने की सम्भावना रहती है। पदार्थ को आत्मा नहीं माना जा सकता। जैसाकि *भौम इज्य-धीः* (भागवत १०.८४.१३) शब्दों से सूचित होता है, भौतिकताग्रस्त मायावादी लोग पदार्थ में ईश्वर के रूप की कल्पना करते हैं, यद्यपि उनकी कल्पना के अनुसार ईश्वर अनन्त तथा रूपविहीन होते हैं। यह केवल मानसिक तर्क है। यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं, किन्तु वे अपने आपको गोपी की स्थिति में प्रस्तुत करते थे। उन्होंने राजा के पुत्र को साक्षात् महाराज नन्द का पुत्र, व्रजेन्द्रनन्दन हरि स्वीकार कर लिया। यह वैदिक संस्कृति के आदेश के अनुसार आदर्श दृष्टिकोण है, जिसकी पुष्टि *श्रीमद्भगवद्गीता* (*पण्डिताः समदर्शिनः*) में हुई है। वैष्णव-दर्शन के अनुसार परम सत्य को इस तरह स्वीकार करने की व्याख्या निम्नलिखित शब्दों में *मुण्डक उपनिषद्* (३.२.३) तथा *कठ उपनिषद्* (१.२.२३) में हुई है :

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैषा वृणुते तेन लभ्य-
स्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्॥

"भगवान् की प्राप्ति न तो पटु व्याख्याओं से, न व्यापक बुद्धि से, न ही अत्यधिक सुनने से हो सकती है। वे उसी के द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं, जिसे वे स्वयं चुनते हैं। वे ऐसे व्यक्ति को अपना स्वरूप प्रदर्शित करते हैं।"

जीव ऐसी आध्यात्मिक दृष्टि के अभाव के कारण भौतिक अस्तित्व में फँसा हुआ है। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने *कल्याण-कल्पतरु* में एक गीत लिखा है, *संसारे आसिया प्रकृति भजिया 'पुरुष' अभिमाने मरि।* जब जीव इस जगत् में

आता है, तो वह अपने आपको भोक्ता समझता है। इस तरह वह अधिकाधिक फँसता जाता है।

कृतार्थ हइलाङ आमि ईँहार दरशने ।
एत बलि' पुनः तारे कैल आलिङ्गने ॥६२॥

कृतार्थ हइलाङआमि इँहार दरशने ।
एत बलि' पुनः तारे कैल आलिङ्गने ॥६२॥

कृत-अर्थ हइलाङ—अत्यन्त कृतार्थ हुआ हूँ; **आमि**—मैं; **इँहार**—इस बालक के; **दरशने**—दर्शन से; **एत बलि'**—यह कहकर; **पुनः**—दोबारा; **तारे**—उसे; **कैल**—किया; **आलिङ्गने**—आलिंगन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने आगे कहा, "मैं इस लड़के को देखकर ही अत्यन्त कृतार्थ हो गया हूँ।" यह कहकर महाप्रभु ने राजकुमार को फिर से आलिंगन में ले लिया।

प्रभु-स्पर्शे राज-पुत्रेर हैल प्रेमावेश ।
स्वेद, कम्प, अश्रु, स्तम्भ, पुलक विशेष ॥६३॥

प्रभु-स्पर्शे राज-पुत्रेर हैल प्रेमावेश ।
स्वेद, कम्प, अश्रु, स्तम्भ, पुलक विशेष ॥६३॥

प्रभु-स्पर्श—महाप्रभु के स्पर्श से; **राज-पुत्रेर**—राजा के पुत्र का; **हैल**—हो गया; **प्रेम-आवेश**—प्रेमावेश; **स्वेद**—स्वेद; **पसीना**; **कम्प**—कम्पन; **अश्रु**—अश्रु; **स्तम्भ**—स्तम्भ; **पुलक**—रोमांच; **विशेष**—विशेष प्रकार से।

अनुवाद

ज्योंही श्री चैतन्य महाप्रभु ने राजकुमार का स्पर्श किया, त्योंही उसके शरीर में प्रेमावेश के लक्षण स्वतः उत्पन्न हो गये। ये लक्षण थे—पसीना, कँपकँपी, आँसू, स्तम्भ तथा हर्ष।

'कृष्ण' 'कृष्ण' कहे, नाचे, करये रोदन ।
ताँर भाग्य देखि' श्लाघा करे भक्त-गण ॥६४॥

'कृष्ण' 'कृष्ण' कहे, नाचे, करये रोदन ।
ताँर भाग्य देखि' श्लाघा करे भक्त-गण ॥ ६४॥

कृष्ण कृष्ण—हे कृष्ण; हे कृष्ण; **कहे**—कहने लगा; **नाचे**—नाचने लगा; **करये**—करने लगा; **रोदन**—रोना; **ताँर**—उसका; **भाग्य**—भाग्य; **देखि'**—देखकर; **श्लाघा**—प्रशंसा; **करे**—करने लगे; **भक्त-गण**—सभी भक्त।

अनुवाद

वह राजकुमार रोने और नाचने लगा तथा "कृष्ण! कृष्ण" का उच्चारण करने लगा। उसके शारीरिक लक्षण तथा उसके कीर्तन एवं नृत्य को देखकर सारे भक्तों ने उसके सौभाग्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

তবে মহাপ্রভু তাঁরে ধৈর্য করাইল ।
নিত্য আসি' আমায় মিলিহ—এই আজ্ঞা দিল ॥ ৬৫॥

তবে মহাপ্রভু তাঁরে ধৈর্য্য করাইল ।
নিত্য আসি' আমায় মিলিহ—এই আজ্ঞা দিল ॥ ৬৫॥

তবে—उस समय; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँरे**—बालक को; **धैर्य्य**—शान्त; **कराइल**—कराया; **नित्य**—नित्य; **प्रतिदिन**; **आसि'**—आकर; **आमाय**—मुझे; **मिलिह**—मिले; **एइ आज्ञा**—यह आज्ञा; **दिल**—दी।

अनुवाद

उस समय श्री चैतन्य महाप्रभु ने उस नवयुवक को शान्त कराया और उसे आदेश दिया कि वह नित्य ही उनसे मिलने वहाँ आया करे।

বিদায় হঞা রায় আইল রাজ-পুত্রে লঞা ।
রাজা সুখ পাইল পুত্রের চেষ্টা দেখিয়া ॥ ৬৬॥

বিদায় হঞা রায় আইল রাজ-পুত্রে লঞা ।
রাজা সুখ পাইল পুত্রের চেষ্টা দেখিয়া ॥ ৬৬॥

विदाय हञा—विदा लेकर; **राय**—रामानन्द राय; **आइल**—लौट आये; **राज-पुत्रे लञा**—राजा के पुत्र को लेकर; **राजा**—राजा ने; **सुख पाइल**—अत्यन्त आनन्द अनुभव किया; **पुत्रेर**—अपने पुत्र की; **चेष्टा**—गतिविधि; **देखिया**—देखकर।

अनुवाद

तब रामानन्द राय तथा राजकुमार ने श्री चैतन्य महाप्रभु से विदा ली और रामानन्द राय राजकुमार को राजमहल वापस ले आये। जब राजा ने अपने पुत्र के कार्यकलापों के बारे में सुना, तो वे अत्यन्त सुखी हुए।

পুত্রে আলিঙ্গন করি' প্রেমাবিষ্ট হৈলা ।
সাক্ষাৎপরশ যেন মহাপ্রভুর পাইলা ॥ ৬৭ ॥

पुत्रे आलिङ्गन करि' प्रेमाविष्ट हैला ।
साक्षात्परश य़ेन महाप्रभुर पाइला ॥ ६७ ॥

पुत्रे—अपने पुत्र को; **आलिङ्गन**—गले लगाकर; **करि'**—करके; **प्रेम-आविष्ट हैला**—प्रेमाविष्ट हो गये; **साक्षात्**—साक्षात्; **परश**—स्पर्श; **य़ेन**—जैसे; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **पाइला**—उन्होंने पाया।

अनुवाद

अपने पुत्र का आलिंगन करने से ही राजा प्रेमाविष्ट हो गये, मानो उन्हें साक्षात् चैतन्य महाप्रभु का स्पर्श मिला हो।

সেই হৈতে ভাগ্যবান্রাজার নন্দন ।
প্রভু-ভক্ত-গণ-মধ্যে হৈলা এক-জন ॥ ৬৮ ॥

सेइ हैते भाग्यवान्राजार नन्दन ।
प्रभु-भक्त-गण-मध्ये हैला एक-जन ॥ ६८ ॥

सेइ हैते—उस दिन से लेकर; **भाग्यवान्**—महा भाग्यवान्; **राजार नन्दन**—राजा का पुत्र; **प्रभु-भक्त-गण-मध्ये**—महाप्रभु के अन्तरंग भक्तों के मध्य; **हैला**—हो गया; **एक-जन**—एक व्यक्ति।

अनुवाद

तब से भाग्यशाली राजकुमार महाप्रभु के सर्वाधिक अन्तरंग भक्तों में से एक बन गया।

तात्पर्य

इस सम्बन्ध में श्रील प्रबोधानन्द सरस्वती लिखते हैं— *यत्कारुण्य कटाक्ष*

वैभव-वताम्। यदि श्री चैतन्य महाप्रभु क्षण-भर के लिए भी किसी पर अपनी दृष्टि कर दें, तो वह व्यक्ति तुरन्त ही भगवान् का सर्वाधिक विश्वस्त भक्त बन जाता है। वह राजकुमार महाप्रभु को पहली बार मिलने आया था, किन्तु महाप्रभु की कृपा से वह तुरन्त सर्वोच्च भक्त बन गया। यह सैद्धान्तिक नहीं, अपितु व्यवहार की बात थी। हम यहाँ *नग्न-मातृका-न्याय* सूत्र को लागू नहीं कर सकते। इसका अर्थ यह है कि यदि किसी की माता अपने बचपन में नग्न रहती थी, तो कई बच्चों की माँ बन जाने पर भी उसे उसी तरह नग्न रहना चाहिए। यदि किसी को महाप्रभु की कृपा का आशीर्वाद मिलता है, तो वह तुरन्त सर्वोच्च भगवद्भक्त बन जाता है। *नग्न-मातृका-न्याय* का तर्क कहता है कि यदि कोई व्यक्ति अमुक-अमुक तिथि को किसी उच्च पद पर नहीं पहुँच पाता, तो वह रात-भर में महान् भक्त नहीं बन सकता। इस विशिष्ट दृष्टान्त से वह साक्ष्य प्राप्त होता है, जिससे इस सिद्धान्त का विरोध हो जाता है। पिछले दिन वह लड़का सामान्य राजकुमार था, किन्तु अगले दिन उसकी गिनती भगवान् के सर्वोच्च भक्तों में होने लगी। यह सब महाप्रभु की अहैतुकी कृपा से सम्भव हो सका। भगवान् सर्वशक्तिमान हैं और वे अपनी इच्छानुसार कार्य कर सकते हैं।

एइ-मत महाप्रभु भक्त-गण-सङ्गे ।
निरन्तर क्रीड़ा करे सङ्कीर्तन-रङ्गे ॥ ६९॥

एइ-मत महाप्रभु भक्त-गण-सङ्गे ।
निरन्तर क्रीड़ा करे सङ्कीर्तन-रङ्गे ॥ ६९ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भक्त-गण-सङ्गे**—अपने शुद्ध भक्तों के समाज में; **निरन्तर**—निरन्तर; **क्रीड़ा करे**—लीलाएँ करते; **सङ्कीर्तन-रङ्गे**—अपने संकीर्तन आन्दोलन के दौरान।

अनुवाद

इस प्रकार श्री चैतन्य महाप्रभु अपनी लीलाएँ करते हुए और संकीर्तन आन्दोलन का विस्तार करते हुए अपने शुद्ध भक्तों के समाज में कार्य करते थे।

आचार्यादि भक्त करे प्रभुरे निमन्त्रण ।
ताहाँ ताहाँ भिक्षा करे लञा भक्त-गण ॥७०॥

आचार्य्यादि भक्त करे प्रभुरे निमन्त्रण ।
ताहाँ ताहाँ भिक्षा करे लञा भक्त-गण ॥ ७० ॥

आचार्य्य-आदि—अद्वैत आचार्य आदि; **भक्त**—भक्तगण; **करे**—करने लगे; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **निमन्त्रण**—निमंत्रण; **ताहाँ ताहाँ**—यहाँ वहाँ; **भिक्षा करे**—भोजन करते; **लञा**—लेकर; **भक्त-गण**—सभी भक्त।

अनुवाद

अद्वैत आचार्य जैसे कुछ प्रमुख भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु को अपने अपने घरों में भोजन करने के लिए निमन्त्रित किया करते थे। महाप्रभु ऐसे निमन्त्रणों को स्वीकार कर लेते थे और अपने भक्तों समेत वहाँ जाते थे।

एइ-मत नाना रङ्गे दिन कत गेल ।
जगन्नाथेर रथ-यात्रा निकट हइल ॥७१॥

एइ-मत नाना रङ्गे दिन कत गेल ।
जगन्नाथेर रथ-यात्रा निकट हइल ॥ ७१ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **नाना रङ्गे**—नाना प्रकार के आनन्द में; **दिन कत**—कुछ दिन; **गेल**—बीत गये; **जगन्नाथेर**—श्री जगन्नाथ की; **रथ-यात्रा**—रथयात्रा; **निकट हइल**—निकट आ गई।

अनुवाद

इस तरह महाप्रभु ने कुछ दिन बड़े हर्ष-उल्लास के साथ बिताये। तब जगन्नाथ रथयात्रा महोत्सव निकट आ पहुँचा।

प्रथमेइ काशी-मिश्रे प्रभु बोलाइल ।
पड़िछा-पात्र, सार्वभौमे बोलाञा आनिल ॥७२॥

प्रथमेइ काशी-मिश्रे प्रभु बोलाइल ।
पड़िछा-पात्र, सार्वभौमे बोलाञा आनिल ॥ ७२ ॥

प्रथमेइ—आरम्भ में; **काशी-मिश्रे**—काशी मिश्र को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने;

बोलाइल—बुलावा भेजा; **पड़िछा-पात्र**—मन्दिर के अध्यक्ष को; **सार्वभौमे**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **बोलाञा**—बुलाकर; **आनिल**—लाये।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने सर्वप्रथम काशी मिश्र को बुलावा भेजा, तब मन्दिर की देख-रेख करने वाले को और उसके बाद सार्वभौम को बुलावा भेजा।

तिन-जन-पाशे प्रभु हासिया कहिल ।
गुण्डिचा-मन्दिर-मार्जन-सेवा मागि' निल ॥७३॥

तिन-जन-पाशे प्रभु हासिया कहिल ।
गुण्डिचा-मन्दिर-मार्जन-सेवा मागि' निल ॥७३॥

तिन-जन-पाशे—तीन व्यक्तियों की उपस्थिति में; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **हासिया**—मुस्कुराकर; **कहिल**—कहा; **गुण्डिचा-मन्दिर-मार्जन**—गुण्डीचा मन्दिर को धोने की; **सेवा**—सेवा; **मागि' निल**—माँगी।

अनुवाद

जब ये तीनों आ गये, तो महाप्रभु ने उनसे गुण्डिचा मन्दिर की धुलाई करने की अनुमति माँगी।

तात्पर्य

यह गुण्डिचा मन्दिर जगन्नाथ मन्दिर से दो मील उत्तर पूर्व दिशा में स्थित है। रथयात्रा उत्सव के समय, भगवान् जगन्नाथ अपने मूल मन्दिर से गुण्डिचा मन्दिर को जाते हैं और वहाँ एक सप्ताह विश्राम करते हैं। एक सप्ताह के बाद वे अपने मूल मन्दिर में वापस आते हैं। ऐसी जनश्रुति है कि जगन्नाथ मन्दिर की स्थापना करने वाले राजा इन्द्रद्युम्न की पत्नी का नाम गुण्डिचा था। प्रामाणिक शास्त्र में भी गुण्डिचा मन्दिर के नाम का उल्लेख मिलता है। अनुमान है कि गुण्डिचा मन्दिर का क्षेत्रफल २८८ क्यूबिट (हाथ) × २१५ क्यूबिट है (एक क्यूबिट लगभग डेढ़ फूट के बराबर माना जाता है)। मुख्य मन्दिर भीतर से ३६ क्यूबिट × ३० क्यूबिट है और कीर्तन-भवन ३२ क्यूबिट × ३० क्यूबिट है।

পড়িছা কহে,—আমি-সব সেবক তোমার ।
যে তোমার ইচ্ছা সেই কর্তব্য আমার ॥৭৪॥

পড়িছা কহে,—আমি-সব সেবক তোমার ।
য়ে তোমার ইচ্ছা সেই কর্তব্য আমার ॥৭৪॥

पड़िछा कहे—अध्यक्ष ने कहा; **आमि-सब**—हम सब हैं; **सेवक तोमार**—आपके सेवक; **ये तोमार**—आपकी जो कुछ; **इच्छा**—इच्छा; **सेइ**—वही; **कर्तव्य आमार**—हमारा कर्तव्य।

अनुवाद

गुण्डिचा मन्दिर की धुलाई करने की महाप्रभु की याचना सुनकर पड़िछा अर्थात् मन्दिर के निरीक्षक ने कहा, "हे महोदय, हम सभी आपके सेवक हैं। आप जो भी इच्छा करेंगे, उसे पूरा करना हमारा कर्तव्य है।

বিশেষে রাজার আজ্ঞা হঞাছে আমারে ।
প্রভুর আজ্ঞা যেই, সেই শীঘ্র করিবারে ॥৭৫॥

বিশেষে রাজার আজ্ঞা হঞাছে আমারে ।
প্রভুর আজ্ঞা যেই, সেই শীঘ্র করিবারে ॥৭৫॥

विशेषे—विशेषकर; **राजार**—राजा की; **आज्ञा**—आज्ञा; **हञाछे**—है; **आमारे**—मेरे लिए; **प्रभुर**—आपकी; **आज्ञा**—आज्ञा; **येइ**—जो; **सेइ**—वह; **शीघ्र करिबारे**—शीघ्र पूरी करो।

अनुवाद

"राजा ने मुझे विशेष आदेश दिया है कि जो भी आप आज्ञा दें, उसे मैं तुरन्त पूरा करूँ।

তোমার যোগ্য সেবা নহে মন্দির-মার্জন ।
এই এক লীলা কর, যে তোমার মন ॥৭৬॥

তোমার য়োগ্য সেবা নহে মন্দির-মার্জন ।
এই এক লীলা কর, যে তোমার মন ॥৭৬॥

तोमार—आपके; **य़ोग्य**—योग्य; **सेवा**—सेवा; **नहे**—नहीं; **मन्दिर-मार्जन**—मन्दिर को

धोना; **एइ**—यह; **एक**—एक; **लीला**—लीला; **कर**—आप करें; **ग्रे तोमार मन**—जैसे आप चाहें।

अनुवाद

"हे प्रभु, मन्दिर की धुलाई करने की सेवा आपके योग्य नहीं है। फिर भी, यदि आप चाहते हैं, तो इसे हम आपकी लीला के रूप में स्वीकार करते हैं।

किन्तु घट, सम्मार्जनी बहुत चाहिये ।
आज्ञा देह—आजि सब इहाँ आनि दिये ॥ ७७ ॥

किन्तु घट, सम्मार्जनी बहुत चाहिये ।
आज्ञा देह—आजि सब इहाँ आनि दिये ॥ ७७ ॥

किन्तु—किन्तु; **घट**—घड़े; **सम्मार्जनी**—झाड़ू; **बहुत**—बहुत; **चाहिये**—चाहिए; **आज्ञा देह**—आज्ञा दो; **आजि**—आज ही शीघ्र; **सब**—सब; **इहाँ**—यहाँ; **आनि दिये**—मैं लाकर दूँगा।

अनुवाद

"मन्दिर की धुलाई करने के लिए अनेक घड़ों तथा झाड़ूओं की आवश्यकता होगी, अतएव आप मुझे आदेश दें। मैं ये सारी चीजें तुरन्त लाये देता हूँ।"

नूतन एक-शत घट, शत सम्मार्जनी ।
पड़िछा आनिया दिल प्रभुर इच्छा जानि' ॥ ७८ ॥

नूतन एक-शत घट, शत सम्मार्जनी ।
पड़िछा आनिया दिल प्रभुर इच्छा जानि' ॥ ७८ ॥

नूतन—नये; **एक-शत**—एक सौ; **घट**—घड़े; **शत**—एक सौ; **सम्मार्जनी**—झाड़ू; **पड़िछा**—अध्यक्ष ने; **आनिया**—लाकर; **दिल**—दिये; **प्रभुर**—महाप्रभु की; **इच्छा**—इच्छा; **जानि'**—जानकर।

अनुवाद

ज्योंही पड़िछा (निरीक्षक) को महाप्रभु की इच्छा का पता चल गया, उसने तुरन्त एक सौ नये घड़े तथा मन्दिर बुहारने के लिए एक सौ झाड़ू लाकर दे दिये।

आर दिने प्रभाते लञा निज-गण ।
श्री-हस्ते सबार अङ्गे लेपिला चन्दन ॥७९॥

आर दिने प्रभाते लञा निज-गण ।
श्री-हस्ते सबार अङ्गे लेपिला चन्दन ॥७९॥

आर दिने—अगले दिन; **प्रभाते**—प्रात:काल; **लञा**—लेकर; **निज-गण**—अपने निजी भक्त; **श्री-हस्ते**—अपने हाथ से; **सबार अङ्गे**—प्रत्येक के शरीर पर; **लेपिला चन्दन**—चन्दन का लेप किया।

अनुवाद

अगले दिन भोर होते ही महाप्रभु ने अपने संगियों को अपने साथ ले लिया और अपने हाथ से उन सबके शरीरों पर चन्दन-लेप लगाया।

श्री-हस्ते दिल सबारे एक एक मार्जनी ।
सब-गण लञा प्रभु चलिला आपनि ॥८०॥

श्री-हस्ते दिल सबारे एक एक मार्जनी ।
सब-गण लञा प्रभु चलिला आपनि ॥८०॥

श्री-हस्ते—अपने हाथ से; **दिल**—दिया; **सबारे**—उनमें से प्रत्येक को; **एक एक**—एक एक; **मार्जनी**—झाड़ू; **सब-गण**—सभी साथी; **लञा**—लेकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **चलिला**—चले; **आपनि**—स्वयं।

अनुवाद

फिर उन्होंने अपने हाथ से हर भक्त को एक-एक झाड़ू दी और उन सबको अपने साथ लेकर महाप्रभु गुण्डिचा गये।

गुण्डिचा-मन्दिरे गेला करिते मार्जन ।
प्रथमे मार्जनी लञा करिल शोधन ॥८१॥

गुण्डिचा-मन्दिरे गेला करिते मार्जन ।
प्रथमे मार्जनी लञा करिल शोधन ॥८१॥

गुण्डिचा-मन्दिरे—गुण्डीचा मन्दिर को; **गेला**—गये; **करिते**—करने; **मार्जन**—धोने के लिए; **प्रथमे**—पहले; **मार्जनी**—झाड़ू; **लञा**—लेकर; **करिल**—किया; **शोधन**—साफ।

अनुवाद

इस तरह महाप्रभु तथा उनके संगी गुण्डिचा मन्दिर की सफाई करने गये। सर्वप्रथम उन्होंने झाड़ूओं से मन्दिर को बुहारा।

ভিতর মন্দির উপর,—সকল মাজিল ।
সিংহাসন মাজি' পুনঃ স্থাপন করিল ॥ ৮২ ॥

भितर मन्दिर उपर,—सकल माजिल ।
सिंहासन माजि' पुनः स्थापन करिल ॥ ८२ ॥

भितर मन्दिर—मन्दिर के भीतर; **उपर**—छत; **सकल माजिल**—सब कुछ साफ किया; **सिंहासन**—भगवान् का सिंहासन; **माजि'**—साफ करके; **पुनः**—पुनः; **स्थापन**—स्थापना; **करिल**—की।

अनुवाद

महाप्रभु ने मन्दिर के भीतर की हर चीज को, यहाँ तक कि छत को भी बहुत अच्छी तरह से साफ किया। फिर उन्होंने सिंहासन उठाया, उसे साफ किया और उसे पुनः उसी स्थान पर रख दिया।

ছোট-বড়-মন্দির কৈল মার্জন-শোধন ।
পাছে তৈছে শোধিল শ্রী-জগমোহন ॥ ৮৩ ॥

छोट-बड़-मन्दिर कैल मार्जन-शोधन ।
पाछे तैछे शोधिल श्री-जगमोहन ॥ ८३ ॥

छोट-बड़-मन्दिर—छोटे बड़े सब मन्दिर; **कैल**—किये; **मार्जन-शोधन**—अच्छी प्रकार साफ; **पाछे**—तत्पश्चात्; **तैछे**—उसी प्रकार; **शोधिल**—साफ किया; **श्री-जगमोहन**—मूल मन्दिर तथा कीर्तन हाल के बीच के स्थान को।

अनुवाद

इस तरह महाप्रभु तथा उनके संगियों ने मन्दिर की बड़ी तथा छोटी सारी इमारतें बुहारीं और साफ कीं। अन्त में उन्होंने मन्दिर तथा कीर्तन के सभास्थल के बीच के भाग को साफ किया।

चारि-दिके शत भक्त सम्मार्जनी-करे ।
आपनि शोधेन प्रभु, शिखा'न सबारे ॥८४॥

चारि-दिके शत भक्त सम्मार्जनी-करे ।
आपनि शोधेन प्रभु, शिखा'न सबारे ॥८४॥

चारि-दिके—चारों ओर; **शत**—सैंकड़ों; **भक्त**—भक्त; **सम्मार्जनी-करे**—सफाई करने लगे; **आपनि**—स्वयं; **शोधेन**—सफाई करते थे; **प्रभु**—महाप्रभु; **शिखा'न सबारे**—उन सबको सिखाते हुए।

अनुवाद

सैंकड़ों भक्त मन्दिर की चारों ओर सफाई करने में लगे थे और श्री चैतन्य महाप्रभु दूसरों को शिक्षा देने के लिए स्वयं भी कार्य कर रहे थे।

प्रेमोल्लासे शोधेन, लयेन कृष्ण-नाम ।
भक्त-गण 'कृष्ण' कहे, करे निज-काम ॥८५॥

प्रेमोल्लासे शोधेन, लयेन कृष्ण-नाम ।
भक्त-गण 'कृष्ण' कहे, करे निज-काम ॥८५॥

प्रेम-उल्लासे—बड़े आनन्द में; **शोधेन**—साफ किया; **लयेन**—करते थे; **कृष्ण**—हरे कृष्ण; **नाम**—नाम; **भक्त-गण**—भक्तगण; **कृष्ण कहे**—कृष्ण कहते थे; **करे**—करते थे; **निज-काम**—अपना अपना कार्य।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने अत्यन्त उल्लसित होकर सारे समय कृष्ण-नाम का उच्चारण करते हुए मन्दिर को बुहारा और धोया। इसी तरह सारे भक्त भी कीर्तन करते जाते थे और अपना-अपना कार्य कर रहे थे।

धूलि-धूसर तनु देखिते शोभन ।
काहाँ काहाँ अश्रु-जले करे सम्मार्जन ॥८६॥

धूलि-धूसर तनु देखिते शोभन ।
काहाँ काहाँ अश्रु-जले करे सम्मार्जन ॥८६॥

धूलि—धूल; **धूसर**—मिट्टी; **तनु**—तन; **देखिते**—देखने में; **शोभन**—अति सुन्दर; **काहाँ काहाँ**—कहीं कहीं; **अश्रु-जले**—अश्रुओं से; **करे**—करते थे; **सम्मार्जन**—धोना।

अनुवाद

महाप्रभु का सारा सुन्दर शरीर धूल से धूसरित था। इससे वह और भी दिव्य रूप से सुन्दर लगने लगा था। मन्दिर की सफाई करते हुए कभी-कभी महाप्रभु के आँसू आ जाते और कहीं-कहीं तो उन्होंने उन्हीं आँसुओं से ही धुलाई की।

ভোগ-মন্দির শোধন করি' শোধিল প্রাঙ্গণ ।
সকল আবাস ক্রমে করিল শোধন ॥ ৮৭ ॥

भोग-मन्दिर शोधन करि' शोधिल प्राङ्गण ।
सकल आवास क्रमे करिल शोधन ॥ ८७ ॥

भोग-मन्दिर—मन्दिर में भोजन रखने का स्थान; **शोधन करि'**—साफ करके; **शोधिल प्राङ्गण**—आंगन साफ किया; **सकल**—सभी; **आवास**—निवास-स्थान; **क्रमे**—एक के बाद दूसरा; **करिल शोधन**—साफ किया।

अनुवाद

इसके बाद जहाँ अर्चाविग्रह का भोजन रखा जाता था (भोग-मन्दिर), उस स्थान की सफाई की गई। तत्पश्चात् आँगन साफ किया गया और तब एक-एक करके सारे रिहायशी मकान साफ किये गये।

তৃণ, ধূলি, ঝিঙ্কুর, সব একত্র করিয়া ।
বহির্বাসে লঞা ফেলায় বাহির করিয়া ॥ ৮৮ ॥

तृण, धूलि, झिङ्कुर, सब एकत्र करिया ।
बहिर्वासे लञा फेलाय बाहिर करिया ॥ ८८ ॥

तृण—तिनके; **धूलि**—धूल; **झिङ्कुर**—बालु-कण; **सब**—सब; **एकत्र**—एक स्थान पर इकट्ठा; **करिया**—करके; **बहिर्वासे लञा**—अपने निजी बाहरी वस्त्र पर लेकर; **फेलाय**—फेंक दिया; **बाहिर करिया**—बाहर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने तिनकों, धूल तथा बालू के कणों को एक स्थान पर एकत्र किया और फिर अपने वस्त्र में बाँधकर उन्हें बाहर ले जाकर फेंक दिया।

এই-মত ভক্ত-গণ করি' নিজ-বাসে ।
তৃণ, ধূলি বাহিরে ফেলায় পরম হরিষে ॥৮৯॥

এइ-মত ভক্ত-গণ করি' নিজ-বাসে ।
তৃণ, ধূলি বাহিরে ফেলায় পরম হরিষে ॥৮৯॥

এइ-মত—इसी प्रकार; **ভক্ত-গণ**—सारे भक्त; **করি'**—करके; **নিজ-বাসে**—अपने अपने वस्त्रों में; **তৃণ**—तिनके; **ধূলি**—धूल; **বাহিরে ফেলায়**—बाहर फेंकने लगे; **পরম হরিষে**—परम आनन्द में आकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के उदाहरण का अनुसरण करते हुए सारे भक्त भी उल्लासपूर्वक तिनके तथा धूल को अपने अपने वस्त्रों में बाँध-बाँधकर मन्दिर के बाहर ले जाकर फेंकने लगे।

প্রভু কহে,—কে কত করিয়াছ সম্মার্জন ।
তৃণ, ধূলি দেখিলেই জানিব পরিশ্রম ॥৯০॥

প্রভু কহে,—কে কত করিয়াছ সম্মার্জন ।
তৃণ, ধূলি দেখিলেइ জানিব পরিশ্রম ॥৯০॥

প্রভু কহে—महाप्रभु ने कहा; **কে**—तुम में से प्रत्येक व्यक्ति; **কত**—कितनी; **করিয়াছ**—की है; **সম্মার্জন**—सफाई; **তৃণ**—तिनके; **ধূলি**—धूलि; **দেখিলেइ**—जब मैं देखूँगा; **জানিব**—मैं समझ सकता हूँ; **পরিশ্রম**—तुमने कितना परिश्रम किया है।

अनुवाद

तब महाप्रभु ने भक्तों से कहा, "मैं केवल यह देखकर कि कितने तिनके तथा धूल बाहर ले जाकर ढेर लगाया गया है, बतला सकता हूँ कि आप लोगों ने कितना परिश्रम किया है और कितनी अच्छी तरह से मन्दिर की सफाई की है।"

সবার ঝ্যাঁটান বোঝা একত্র করিল ।
সবা হৈতে প্রভুর বোঝা অধিক হ-ইল ॥৯১॥

সবার ঝ্যাঁটান বোঝা একত্র করিল ।
সবা হৈতে প্রভুর বোঝা অধিক হইল ॥৯১॥

सबार—सब की; **इयाँटान**—इकट्ठी की हुई धूलि; **बोझा**—वजन; **एकत्र**—एक स्थान पर इकट्ठा करके किया हुआ; **करिल**—किया; **सबा हैते**—उन सबकी अपेक्षा; **प्रभुर बोझा**—श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा एकत्रित धूलि का ढेर; **अधिक हइल**—अधिकतर था।

अनुवाद

यद्यपि सारे भक्तों ने धूल का एक ढेर लगाया था, किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु का ढेर उस से भी बड़ा था।

এই-মত অভ্যন্তর করিল মার্জন ।
পুনঃ সবাকারে দিল করিয়া বণ্টন ॥৯২॥

এइ-मत अभ्यन्तर करिल मार्जन ।
पुनः सबाकारे दिल करिया वण्टन ॥९२॥

एइ-मत—इस प्रकार; **अभ्यन्तर**—अन्दर; **करिल**—की; **मार्जन**—सफाई; **पुनः**—पुनः; **सबाकारे**—उन सबको; **दिल**—दिया; **करिया वण्टन**—क्षेत्र बाँट दिया।

अनुवाद

जब मन्दिर की भीतरी सफाई पूरी हो गई, तो महाप्रभु ने फिर से भक्तों द्वारा साफ किये जाने के लिए अलग-अलग खण्ड निर्धारित किये।

সূক্ষ্ম ধূলি, তৃণ, কাঙ্কর, সব করহ দূর ।
ভাল-মতে শোধন করহ প্রভুর অন্তঃপুর ॥৯৩॥

सूक्ष्म धूलि, तृण, काङ्कर, सब करह दूर ।
भाल-मते शोधन करह प्रभुर अन्तःपुर ॥९३॥

सूक्ष्म धूलि—सूक्ष्म धूलि (बारीक धूलि); **तृण**—तृण; **काङ्कर**—बालु के कण; **सब**—सब; **करह**—करो; **दूर**—दूर; **भाल-मते**—अच्छी तरह; **शोधन**—साफ करके; **करह**—करो; **प्रभुर**—भगवान् के; **अन्तःपुर**—भीतर।

अनुवाद

तत्पश्चात् महाप्रभु ने सबको आदेश दिया कि वे सारी बारीक धूल, तिनके तथा बालू के कणों को बाहर फेंककर अच्छी तरह से मन्दिर के भीतरी भाग की सफाई करें।

সব বৈষ্ণব লঞা যবে দুই-বার শোধিল ।
দেখি' মহাপ্রভুর মনে সন্তোষ হইল ॥৯৪॥

सब वैष्णव लञा ग्रबे दुइ-बार शोधिल ।
देखि' महाप्रभुर मने सन्तोष हइल ॥ ९४॥

सब—सब; **वैष्णव**—भक्त; **लञा**—लेकर; **ग्रबे**—जब; **दुइ-बार**—दोबारा; **शोधिल**—सफाई की; **देखि'**—देखकर; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **मने**—मन में; **सन्तोष**—सन्तोष; **हइल**—हुआ।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु तथा सारे वैष्णवों ने मन्दिर की दुबारा सफाई कर ली, तो श्री चैतन्य महाप्रभु सफाई देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

আর শত জন শত ঘটে জল ভরি' ।
প্রথমেই লঞা আছে কাল অপেক্ষা করি' ॥৯৫॥

आर शत जन शत घटे जल भरि' ।
प्रथमेइ लञा आछे काल अपेक्षा करि' ॥ ९५॥

आर—अन्य; **शत जन**—लगभग एक सौ व्यक्ति; **शत घटे**—एक सौ घड़ों में; **जल**—जल; **भरि'**—भरकर; **प्रथमेइ**—पहले ही; **लञा**—लेकर; **आछे**—थे; **काल**—समय की; **अपेक्षा करि'**—प्रतीक्षा कर रहे थे।

अनुवाद

जब मन्दिर बुहारा जा रहा था, तो लगभग एक सौ व्यक्ति जल से भरे घड़े लिए तैयार खड़े थे और उनमें से पानी फेंकने के महाप्रभु के आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे।

'জল আন' বলি' যবে মহাপ্রভু কহিল ।
তবে শত ঘট আনি' প্রভু-আগে দিল ॥৯৬॥

'जल आन' बलि' ग्रबे महाप्रभु कहिल ।
तबे शत घट आनि' प्रभु-आगे दिल ॥ ९६॥

जल आन—जल लाओ; **बलि'**—कहकर; **ग्रबे**—जब; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु

ने; **कहिल**—आज्ञा दी; **तबे**—तब; **शत घट**—एक सौ घड़े; **आनि'**—लाकर; **प्रभु-आगे**—महाप्रभु के समक्ष; **दिल**—रख दिये।

अनुवाद

ज्योंही श्री चैतन्य महाप्रभु ने पानी लाने के लिए कहा, त्योंही सारे लोग तुरन्त जल से भरे उन एक सौ घड़ों को ले आये और लाकर महाप्रभु के सामने रख दिये।

प्रथमे करिल प्रभु मन्दिर प्रक्षालन ।
ऊर्ध्व-अधो भित्ति, गृह-मध्य, सिंहासन ॥९७॥

प्रथमे करिल प्रभु मन्दिर प्रक्षालन ।
ऊर्ध्व-अधो भित्ति, गृह-मध्य, सिंहासन ॥ ९७॥

प्रथमे—पहले; **करिल**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **मन्दिर प्रक्षालन**—मन्दिर को धोया; **ऊर्ध्व**—छत पर; **अधः**—फर्श पर; **भित्ति**—दीवारें; **गृह-मध्य**—घर के अन्दर; **सिंहासन**—भगवान् के सिंहासन को।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने सबसे पहिले मुख्य मन्दिर धोया और तब छत, दीवारें, फर्श, सिंहासन तथा कमरे के भीतर की अन्य वस्तुओं को भलीभाँति धोया।

खापरा भरिया जल ऊर्ध्वे चालाइल ।
सेइ जले ऊर्ध्व शोधि भित्ति प्रक्षालिल ॥९८॥

खापरा भरिया जल ऊर्ध्वे चालाइल ।
सेइ जले ऊर्ध्व शोधि भित्ति प्रक्षालिल ॥ ९८॥

खापरा—जग; **भरिया**—भरकर; **जल**—जल; **ऊर्ध्वे**—ऊपर छत पर; **चालाइल**—फेंकने लगे; **सेइ जले**—उस जल से; **ऊर्ध्व शोधि**—छत धोने के बाद; **भित्ति**—दीवारें और फर्श; **प्रक्षालिल**—धुल गये।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं तथा उनके सारे भक्त छत पर जल फेंकने

लगे। जब यह पानी नीचे की ओर गिरा, तो उससे दीवारें तथा फर्श धुल गये।

श्री-हस्ते करेन सिंहासनेर मार्जन ।
प्रभु आगे जल आनि' देय भक्त-गण ॥ ९९ ॥

श्री-हस्ते करेन सिंहासनेर मार्जन ।
प्रभु आगे जल आनि' देय भक्त-गण ॥ ९९ ॥

श्री-हस्ते—अपने हाथ से; **करेन**—करने लगे; **सिंहासनेर मार्जन**—भगवान् के सिंहासन की धुलाई; **प्रभु आगे**—महाप्रभु के समक्ष; **जल**—जल; **आनि'**—लाकर; **देय**—दिया; **भक्त-गण**—सारे भक्तों ने।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु अपने हाथों से भगवान् जगन्नाथ का सिंहासन धोने लगे और सारे भक्त जल लाकर महाप्रभु को देने लगे।

भक्त-गण करे गृह-मध्य प्रक्षालन ।
निज निज हस्ते करे मन्दिर मार्जन ॥ १०० ॥

भक्त-गण करे गृह-मध्य प्रक्षालन ।
निज निज हस्ते करे मन्दिर मार्जन ॥ १०० ॥

भक्त-गण—भक्त-गण; **करे**—करने लगे; **गृह-मध्य**—कमरे के भीतर; **प्रक्षालन**—धुलाई; **निज निज**—अपने अपने; **हस्ते**—हाथ से; **करे**—करने लगे; **मन्दिर मार्जन**—मन्दिर की धुलाई।

अनुवाद

सारे भक्त मन्दिर के भीतर धुलाई करने लगे। हर एक के हाथ में एक एक झाड़ू था, जिससे उन्होंने भगवान् के मन्दिर को स्वच्छ किया।

केह जल आनि' देय महाप्रभुर करे ।
केह जल देय ताँर चरण-उपरे ॥ १०१ ॥

केह जल आनि' देय महाप्रभुर करे ।
केह जल देय ताँर चरण-उपरे ॥ १०१ ॥

केह—कोई; **जल आनि'**—जल लाकर; **देय**—देता था; **महाप्रभुर करे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के हाथ में; **केह**—कोई; **जल देय**—जल डालता था; **ताँर**—उनके; **चरण-उपरे**—चरणकमलों पर।

अनुवाद

उनमें से कोई महाप्रभु के हाथों में पानी लाकर देता और कोई उनके चरणकमलों में पानी गिराता।

केह लुकाञा करे सेइ जल पान ।
केह मागि' लय, केह अन्ये करे दान ॥१०२॥

केह लुकाञा करे सेइ जल पान ।
केह मागि' लय, केह अन्ये करे दान ॥१०२॥

केह—किसी ने; **लुकाञा**—छुपकर; **करे**—किया; **सेइ जल**—उस जल का; **पान**—पान; **केह**—किसी ने; **मागि' लय**—माँगकर लिया; **केह**—किसी और ने; **अन्ये**—किसी दूसरे को; **करे**—दिया; **दान**—दान में।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणों पर गिरने वाले जल को कोई चोरी-चोरी पी रहा था, कोई उस जल को माँग रहा था और कोई उस जल का दान कर रहा था।

घर धुञा' प्रणालिकाय जल छाड़ि' दिल ।
सेइ जले प्राङ्गण सब भरिया रहिल ॥१०३॥

घर धुञा' प्रणालिकाय जल छाड़ि' दिल ।
सेइ जले प्राङ्गण सब भरिया रहिल ॥१०३॥

घर धुञा'—कमरा धोकर; **प्रणालिकाय**—नाली में; **जल**—जल; **छाड़ि' दिल**—जाने दिया; **सेइ जले**—उसी जल से; **प्राङ्गण**—आंगन; **सब**—सब; **भरिया**—भर गया; **रहिल**—भरा रहा।

अनुवाद

जब कमरा धुल गया, तो पानी को एक नाली से बाहर निकाल दिया गया और यही पानी बहकर बाहर के प्रांगण में भर गया।

निज-वस्त्रे कैल प्रभु गृह सम्मार्जन ।
महाप्रभु निज-वस्त्रे माजिल सिंहासन ॥ १०४॥

निज-वस्त्रे कैल प्रभु गृह सम्मार्जन ।
महाप्रभु निज-वस्त्रे माजिल सिंहासन ॥ १०४॥

निज-वस्त्रे—अपने कपड़े से; **कैल**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **गृह**—कमरा; **सम्मार्जन**—पोंछा; **महाप्रभु**—चैतन्य महाप्रभु ने; **निज-वस्त्रे**—अपने कपड़े से; **माजिल**—चमकाया; **सिंहासन**—सिंहासन।

अनुवाद

महाप्रभु ने अपने वस्त्रों से कमरों को पोंछा और उन्हीं वस्त्रों से सिंहासन को चमकाया भी।

शत घट जले हैल मन्दिर मार्जन ।
मन्दिर शोधिया कैल—येन निज मन ॥ १०५॥

शत घट जले हैल मन्दिर मार्जन ।
मन्दिर शोधिया कैल—येन निज मन ॥ १०५॥

शत—एक सौ; **घट**—घड़े; **जले**—पानी से; **हैल**—हो गया; **मन्दिर**—मन्दिर; **मार्जन**—साफ; **मन्दिर**—मन्दिर; **शोधिया**—साफ; **कैल**—किया; **येन**—जैसे; **निज मन**—अपना मन हो।

अनुवाद

इस तरह पानी के सौ घड़ों से सारे कमरे धो दिये गये। कमरों की सफाई के बाद भक्तों के मन कमरों की ही तरह निर्मल हो गये।

निर्मल, शीतल, स्निग्ध करिल मन्दिरे ।
आपन-हृदय येन धरिल बाहिरे ॥ १०६॥

निर्मल, शीतल, स्निग्ध करिल मन्दिरे ।
आपन-हृदय येन धरिल बाहिरे ॥ १०६॥

निर्मल—निर्मल; **शीतल**—शीतल; **स्निग्ध**—प्रसन्न करने वाला; **करिल**—किया; **मन्दिरे**—मन्दिर; **आपन-हृदय**—अपना हृदय; **येन**—जैसे; **धरिल**—रखा हो; **बाहिरे**—बाहर।

अनुवाद

स्वच्छ हो जाने के बाद मन्दिर शुद्ध, शीतल तथा मनभावन हो गया, मानो स्वयं महाप्रभु का शुद्ध मन प्रकट हुआ हो।

शत शत जन जल भरे सरोवरे ।
घाटे स्थान नाहि, केह कूपे जल भरे ॥ १०७॥

शत शत जन जल भरे सरोवरे ।
घाटे स्थान नाहि, केह कूपे जल भरे ॥ १०७॥

शत शत जन—सैंकड़ों व्यक्ति; **जल भरे**—जल भरने लगे; **सरोवरे**—सरोवर के; **घाटे**—घाट पर; **स्थान**—स्थान; **नाहि**—नहीं था; **केह**—किसी ने; **कूपे**—कुएँ से; **जल भरे**—जल खींचा।

अनुवाद

चूँकि सैंकड़ों व्यक्ति सरोवर से जल लाने में लगे हुए थे, अतएव किनारे पर खड़े होने तक के लिए जगह नहीं थी। इसलिए कुछ लोग कुएँ से पानी खींचने लगे।

पूर्ण कुम्भ लञा आइसे शत भक्त-गण ।
शून्य घट लञा याय आर शत जन ॥ १०८॥

पूर्ण कुम्भ लञा आइसे शत भक्त-गण ।
शून्य घट लञा याय आर शत जन ॥ १०८॥

पूर्ण कुम्भ—जल से भरा घड़ा; **लञा**—लेकर; **आइसे**—आये; **शत भक्त-गण**—सैंकड़ों भक्त; **शून्य घट**—खाली घड़ा; **लञा**—वापस लेकर; **याय**—गये; **आर**—अन्य; **शत जन**—सैंकड़ों भक्त।

अनुवाद

सैंकड़ों भक्त जल से भरे घड़े लाते और सैंकड़ों भक्त खाली घड़ों को फिर से भरने के लिए ले जाते।

नित्यानन्द, अद्वैत, स्वरूप, भारती, पुरी ।
ईँहा विनु आर सब आने जल भरि' ॥ १०९॥

नित्यानन्द, अद्वैत, स्वरूप, भारती, पुरी ।
इँहा विनु आर सब आने जल भरि' ॥ १०९ ॥

नित्यानन्द—नित्यानन्द प्रभु; **अद्वैत**—अद्वैत आचार्य; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर; **भारती**—ब्रह्मानन्द भारती; **पुरी**—परमानन्द पुरी; **इँह**—इन; **विनु**—के सिवाय; **आर**—अन्य; **सब**—सब; **आने**—लाए; **जल**—जल; **भरि'**—भरकर।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु, अद्वैत आचार्य, स्वरूप दामोदर, ब्रह्मानन्द भारती तथा परमानन्द पुरी को छोड़कर सारे लोग घड़ों में पानी भरकर लाने में व्यस्त थे।

घटे घटे ठेकि' कत घट भाङ्गि' गेल ।
शत शत घट लोक ताहाँ लञा आइल ॥ ११० ॥

घटे घटे ठेकि' कत घट भाङ्गि' गेल ।
शत शत घट लोक ताहाँ लञा आइल ॥ ११० ॥

घटे घटे ठेकि'—जब घड़े एक दूसरे से टकराये; **कत**—कई; **घट**—घड़े; **भाङ्गि' गेला**—टूट गये; **शत शत**—सैंकड़ों; **घट**—घड़े; **लोक**—लोग; **ताहाँ**—वहाँ; **लञा**—लेकर; **आइल**—आये।

अनुवाद

लोगों के परस्पर टकरा जाने से अनेक घड़े टूट गये और सैंकड़ों लोगों को पानी भरने के लिए नये घड़े लाने पड़े।

जल भरे, घर धोय, करे हरि-ध्वनि ।
'कृष्ण' 'हरि' ध्वनि विना आर नाहि शुनि ॥ १११ ॥

जल भरे, घर धोय, करे हरि-ध्वनि ।
'कृष्ण' 'हरि' ध्वनि विना आर नाहि शुनि ॥ १११ ॥

जल भरे—जल भर रहे थे; **घर धोय**—कमरे धो रहे थे; **करे हरि-ध्वनि**—हरि के पावन नाम का उच्चारण कर रहे थे; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **हरि**—हरि का पावन नाम; **ध्वनि**—ध्वनि; **विना**—के सिवाए; **आर**—और कुछ; **नाहि**—नहीं था; **शुनि**—सुनने को।

अनुवाद

कुछ लोग घड़े भर रहे थे और कुछ कमरों की धुलाई कर रहे थे, किन्तु सारे लोग कृष्ण तथा हरि के नाम का उच्चारण करते जा रहे थे।

'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' करे घटेर प्रार्थन ।
'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' करे घट समर्पण ॥ ११२॥

'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' करे घटेर प्रार्थन ।
'कृष्ण' 'कृष्ण' कहि' करे घट समर्पण ॥ ११२॥

कृष्ण कृष्ण कहि'—"कृष्ण, कृष्ण" जपते हुए; **करे**—किया; **घटेर**—घड़े; **प्रार्थन**—माँगे; **कृष्ण कृष्ण**—भगवान् कृष्ण का पावन नाम; **कहि'**—जपते हुए; **करे**—किया; **घट**—घड़ों को; **समर्पण**—देना।

अनुवाद

कोई व्यक्ति "कृष्ण, कृष्ण" कहकर घड़ा माँग रहा था और कोई व्यक्ति "कृष्ण, कृष्ण" कहकर घड़ा दे रहा था।

येइँ येइँ कहे, सेइ कहे कृष्ण-नामे ।
कृष्ण-नाम हइल सङ्केत सब-कामे ॥ ११३॥

येइ येइ कहे, सेइ कहे कृष्ण-नामे ।
कृष्ण-नाम हइल सङ्केत सब-कामे ॥ ११३॥

येइ येइ कहे—जो कोई कह रहा था; **सेइ**—वह; **कहे**—कहता था; **कृष्ण-नामे**—'कृष्ण' का पावन नाम लेकर; **कृष्ण-नाम हइल**—'कृष्ण' का पावन नाम हो गया; **सङ्केत**—संकेत; **सब-कामे**—सबके लिए जो कुछ चाहता था।

अनुवाद

जब किसी को कुछ कहना होता, तो वह 'कृष्ण' नाम का उच्चारण करके ऐसा करता। अतएव जिस किसी को जो कुछ माँगना होता, उसके लिए 'कृष्ण' नाम संकेत बन गया था।

प्रेमावेशे प्रभु कहे 'कृष्ण' 'कृष्ण'-नाम ।
एकले प्रेमावेशे करे शत-जनेर काम ॥ ११४॥

प्रेमावेशे प्रभु कहे 'कृष्ण' 'कृष्ण'-नाम ।
एकले प्रेमावेशे करे शत-जनेर काम ॥ ११४॥

प्रेम-आवेशे—प्रेमावेश में; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कहे**—कहते थे; **कृष्ण कृष्ण-नाम**—'कृष्ण' का पावन नाम; **एकले**—अकेले; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **करे**—करते थे; **शत-जनेर काम**—सौ लोगों का काम।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु प्रेमाविष्ट होकर कृष्ण का नाम लेते थे, तो वे स्वयं सैंकड़ों आदमियों का काम करते थे।

শত-হস্তে করেন যেন ক্ষালন-মার্জন ।
প্রতিজন-পাশে যাই' করান শিক্ষণ ॥ ১১৫॥
शत-हस्ते करेन येन क्षालन-मार्जन ।
प्रतिजन-पाशे याइ' करान शिक्षण ॥ ११५॥

शत-हस्ते—एक सौ हाथों से; **करेन**—वे करते थे; **येन**—जैसे; **क्षालन-मार्जन**—धोना और साफ करना; **प्रतिजन-पाशे याइ'**—प्रत्येक के पास जाकर; **करान शिक्षण**—वे उनको सिखा रहे थे।

अनुवाद

ऐसा प्रतीत होता मानो श्री चैतन्य महाप्रभु एक सौ हाथों से सफाई-धुलाई कर रहे हों। वे हर एक भक्त के पास यह शिक्षा देने के लिए पहुँचते कि काम किस तरह करना चाहिए।

ভাল কর্ম দেখি' তারে করে প্রসংশন ।
মনে না মিলিলে করে পবিত্র ভৎর্সন ॥ ১১৬॥
भाल कर्म देखि' तारे करे प्रसंशन ।
मने ना मिलिले करे पवित्र भर्त्सन ॥ ११६॥

भाल—अच्छा; **कर्म**—काम; **देखि'**—देखकर; **तारे**—उसकी; **करे**—करते थे; **प्रसंशन**—प्रशंसा; **मने**—अपने मन में; **ना**—नहीं; **मिलिले**—ठीक लगने पर; **करे**—वे करते थे; **पवित्र**—साफ, बिना दंड दिये; **भर्त्सन**—प्रताड़ना।

अनुवाद

जब कोई ठीक से काम करता, तो महाप्रभु उसकी प्रशंसा करते, किन्तु जब वे देखते कि कोई व्यक्ति सन्तोषजनक कार्य नहीं कर रहा, तो वे बिना किसी द्वेष के उस व्यक्ति की प्रताड़ना करते।

তুমি ভাল করিয়াছ, শিখাহ অন্যেরে ।
এই-মত ভাল কর্ম সেহো যেন করে ॥১১৭॥

तुमि भाल करियाछ, शिखाह अन्येरे ।
एइ-मत भाल कर्म सेहो ग्रेन करे ॥ ११७॥

तुमि—तुमने; **भाल करियाछ**—अच्छा किया है; **शिखाह अन्येरे**—दूसरों को सिखाओ; **एइ-मत**—इस प्रकार; **भाल कर्म**—अच्छा काम; **सेहो**—वह भी; **ग्रेन**—ताकि; **करे**—करे।

अनुवाद

महाप्रभु कहते, "तुमने बहुत अच्छा किया है। तुम दूसरों को भी सिखला दो, जिससे वे भी इसी तरह से काम करें।"

এ-কথা শুনিয়া সবে সঙ্কুচিত হঞা ।
ভাল-মতে কর্ম করে সবে মন দিয়া ॥১১৮॥

ए-कथा शुनिया सबे सङ्कुचित हञा ।
भाल-मते कर्म करे सबे मन दिया ॥ ११८॥

ए-कथा शुनिया—ये शब्द सुनकर; **सबे**—सब; **सङ्कुचित हञा**—संकोच में पड़ गये; **भाल-मते**—बहुत अच्छा; **कर्म करे**—काम किया; **सबे**—सबने; **मन दिया**—ध्यान से।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु से ऐसा सुनकर हर व्यक्ति लज्जित हो जाता। इसलिए भक्तों ने बड़े ही मनोयोग से काम करना आरम्भ कर दिया।

তবে প্রক্ষালন কৈল শ্রী-জগমোহন ।
ভোগ-মন্দির-আদি তবে কৈল প্রক্ষালন ॥১১৯॥

तबे प्रक्षालन कैल श्री-जगमोहन ।
भोग-मन्दिर-आदि तबे कैल प्रक्षालन ॥ ११९॥

तबे—तब; **प्रक्षालन**—धुलाई; **कैल**—की; **श्री-जगमोहन**—श्री जगमोहन (मन्दिर के सामने); **भोग-मन्दिर**—भोग मन्दिर; **आदि**—ऐसे सब स्थान; **तबे**—तब; **कैल प्रक्षालन**—धोये।

अनुवाद

उन्होंने जगमोहन-क्षेत्र की धुलाई की और इसके बाद जहाँ प्रसाद रखा जाता था, वह स्थान धोया गया। फिर अन्य सभी स्थान भी धोये गये।

নাটশালা ধুই' ধুইল চত্বর-প্রাঙ্গণ ।
পাকশালা-আদি করি' করিল প্রক্ষালন ॥১২০॥

नाटशाला धुइ' धुइल चत्वर-प्राङ्गण ।
पाकशाला-आदि करि' करिल प्रक्षालन ॥ १२० ॥

नाट-शाला—मिलने का स्थान; **धुइ'**—धोकर; **धुइल**—धोया; **चत्वर-प्राङ्गण**—आंगन और चबूतरा; **पाक-शाला**—रसोई; **आदि**—आदि; **करि'**—करके; **करिल प्रक्षालन**—धोया।

अनुवाद

इस तरह सभा-भवन, समूचे प्रांगण, चबूतरों, रसोई-घर तथा अन्य कमरों की धुलाई की गई।

মন্দিরের চতুর্দিক্প্রক্ষালন কৈল ।
সব অন্তঃপুর ভাল-মতে ধোয়াইল ॥১২১॥

मन्दिरेर चतुर्दिक्प्रक्षालन कैल ।
सब अन्तःपुर भाल-मते धोयाइल ॥ १२१ ॥

मन्दिरेर—मन्दिर को; **चतुर्-दिक्**—चारों ओर; **प्रक्षालन कैल**—धोया; **सब**—सब; **अन्तःपुर**—कमरों के भीतर; **भाल-मते**—बड़ी सावधानी से; **धोयाइल**—धोया।

अनुवाद

इस तरह मन्दिर के चारों ओर के सारे स्थान भीतर और बाहर से धो दिये गये।

হেন-কালে গৌড়ীয়া এক সুবুদ্ধি সরল ।
প্রভুর চরণ-যুগে দিল ঘট-জল ॥১২২॥

हेन-काले गौड़ीया एक सुबुद्धि सरल ।
प्रभुर चरण-युगे दिल घट-जल ॥ १२२ ॥

हेन-काले—इस समय; **गौड़ीया**—बंगाली वैष्णव; **एक**—एक; **सु-बुद्धि**—अति बुद्धिमान; **सरल**—सरल; **प्रभुर चरण-युगे**—महाप्रभु के चरणकमलों पर; **दिल**—डाला; **घट-जल**—एक घड़ा भर जल।

अनुवाद

जब पूरी तरह सफाई हो चुकी, तो बंगाल से आये हुए एक अत्यन्त बुद्धिमान एवं सरल वैष्णव ने आकर महाप्रभु के चरणकमलों पर जल चढ़ाया।

সেই জল লঞা আপনে পান কৈল ।
তাহা দেখি' প্রভুর মনে দুঃখ রোষ হৈল ॥ ১২৩ ॥
सेइ जल लञा आपने पान कैल ।
ताहा देखि' प्रभुर मने दुःख रोष हैल ॥ १२३ ॥

सेइ जल—वह जल; **लञा**—लेकर; **आपने**—स्वयं; **पान कैल**—पी लिया; **ताहा देखि'**—उसे देखकर; **प्रभुर**—महाप्रभु के; **मने**—मन में; **दुःख**—दुःख; **रोष**—क्रोध; **हैल**—हुआ।

अनुवाद

तब उस गौड़ीय वैष्णव ने उस जल को लेकर पी लिया। यह देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु कुछ-कुछ दुःखी और बाहर से क्रुद्ध भी हुए।

যদ্যপি গোসাঞি তারে হঞাছে সন্তোষ ।
ধর্ম-সংস্থাপন লাগি' বাহিরে মহা-রোষ ॥ ১২৪ ॥
यद्यपि गोसाञि तारे हञाछे सन्तोष ।
धर्म-संस्थापन लागि' बाहिरे महा-रोष ॥ १२४ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **गोसाञि**—महाप्रभु; **तारे**—उससे; **हञाछे**—हो गये; **सन्तोष**—सन्तुष्ट; **धर्म-संस्थापन लागि'**—धार्मिक सिद्धान्तों के शिष्टाचार की स्थापना के लिए; **बाहिरे**—बाहर से; **महा-रोष**—अत्यन्त क्रोध।

अनुवाद

यद्यपि महाप्रभु उससे सन्तुष्ट थे, किन्तु धर्म के शिष्टाचार की स्थापना करने के लिए वे बाहर से क्रुद्ध हुए।

শিক্ষা লাগি' স্বরূপে ডাকি' কহিল তাঁহারে ।
এই দেখ তোমার 'গৌড়ীয়া'র ব্যবহারে ॥ ১২৫ ॥

शिक्षा लागि' स्वरूपे डाकि' कहिल ताँहारे ।
एइ देख तोमार 'गौड़ीया'र व्यवहारे ॥ १२५ ॥

शिक्षा लागि'—शिक्षा देने हेतु; **स्वरूपे**—स्वरूप दामोदर को; **डाकि'**—बुलाकर; **कहिल**—कहा; **ताँहारे**—उसको; **एइ देख**—जरा देखो; **तोमार**—तुम्हारे; **गौड़ीयार**—बंगाल के इस वैष्णव का; **व्यवहारे**—व्यवहार।

अनुवाद

तब महाप्रभु ने स्वरूप दामोदर को बुलाया और उनसे कहा, "जरा अपने बंगाली वैष्णव का व्यवहार तो देखो।

ঈশ্বর-মন্দিরে মোর পদ ধোয়াইল ।
সেই জল আপনি লঞা পান কৈল ॥ ১২৬ ॥

ईश्वर-मन्दिरे मोर पद धोयाइल ।
सेइ जल आपनि लञा पान कैल ॥ १२६ ॥

ईश्वर-मन्दिरे—भगवान् के मन्दिर में; **मोर**—मेरे; **पद**—पाँव को; **धोयाइल**—धोकर; **सेइ जल**—वह जल; **आपनि**—स्वयं; **लञा**—लेकर; **पान कैल**—पी लिया।

अनुवाद

"इस बंगाली वैष्णव ने भगवान् के मन्दिर के भीतर मेरे पाँव धोये हैं। यही नहीं, उसने जल भी पी लिया है।

এই অপরাধে মোর কাহাঁ হবে গতি ।
তোমার 'গৌড়ীয়া' করে এতেক ফৈজতি! ॥ ১২৭ ॥

एइ अपराधे मोर काहाँ हबे गति ।
तोमार 'गौड़ीया' करे एतेक फैजति! ॥ १२७ ॥

एइ अपराधे—ऐसे अपराध से; **मोर**—मेरी; **काहाँ**—कहाँ; **हबे**—होगी; **गति**—गति; **तोमार गौड़ीया**—तुम्हारे बंगाली वैष्णव ने; **करे**—किया है; **एतेक**—ऐसा; **फैजति**—फँसाया है।

अनुवाद

"मैं नहीं जानता कि इस अपराध के कारण मेरी क्या गति होगी! तुम्हारे बंगाली वैष्णव ने मुझे झंझट में फँसा दिया है।"

तात्पर्य

यह महत्त्वपूर्ण है कि श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वरूप दामोदर गोस्वामी से कहा कि बंगाली वैष्णव "तुम्हारा गौड़ीय वैष्णव" है। इसका अर्थ यह हुआ कि चैतन्य महाप्रभु सम्प्रदाय के समस्त गौड़ीय वैष्णव अनुयायी स्वरूप दामोदर गोस्वामी के अधीन हैं। गौड़ीय वैष्णव परम्परा का दृढ़ता से पालन करते हैं। स्वरूप दामोदर गोस्वामी महाप्रभु के निजी सचिव थे। दूसरा भक्त-समुदाय छः गोस्वामियों का था, फिर कविराज गोस्वामी थे। चैतन्य सम्प्रदाय की परम्परा का पालन करना आवश्यक है। भगवान् की सेवा करते समय अनेक प्रकार के अपराध हो सकते हैं, जिनका वर्णन *भक्तिरसामृतसिंधु, हरिभक्ति-विलास* तथा अन्य पुस्तकों में मिलता है। विधानों के अनुसार भगवान् के मन्दिर में अर्चाविग्रह के समक्ष किसी को किसी का नमस्कार स्वीकार नहीं करना चाहिए। न ही अर्चाविग्रह के समक्ष भक्त गुरु को नमस्कार करे और उसका चरण छुये। यह अपराध माना जाता है। श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् थे, अतएव मन्दिर में उनका पाद-प्रक्षालन (चरण धोया जाना) कोई अपराध नहीं था। किन्तु वे एक आचार्य की भूमिका निभा रहे थे, अतएव महाप्रभु अपने आपको एक सामान्य व्यक्ति मान रहे थे। वे सामान्य मनुष्यों को शिक्षा भी देना चाहते थे। ध्यान देने की बात यह है कि गुरु की भूमिका निभाने वाले भक्त को भी अर्चाविग्रह के समक्ष न तो नमस्कार स्वीकार करना चाहिए, न ही अपने शिष्य को अपना पाँव धोने देने चाहिए। यही शिष्टाचार है।

তবে স্বরূপ গোসাঞি তার ঘাড়ে হাত দিয়া ।
ঢেকা মারি' পুরীর বাহির রাখিলেন লঞা ॥১২৮॥

तबे स्वरूप गोसाञि तार घाड़े हात दिया ।
ढेका मारि' पुरीर बाहिर राखिलेन लञा ॥ १२८ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **स्वरूप गोसाञि**—स्वरूप दामोदर गोसांइ; **तार**—उसके; **घाड़े**—गले पर; **हात दिया**—हाथ से स्पर्श किया; **ढेका मारि'**—थोड़ा धकेलकर; **पुरीर बाहिर**—गुण्डीचा पुरी के मन्दिर के बाहर; **राखिलेन**—कर दिया; **लञा**—ले जाकर।

अनुवाद

तभी स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने गौड़ीय वैष्णव की गर्दन पकड़ ली और उसे धक्का देकर गुण्डिचा पुरी मन्दिर से बाहर कर दिया तथा उसे बाहर ही रहने दिया।

पुनः आसि' प्रभु पाय करिल विनय ।
'अज्ञ-अपराध' क्षमा करिते युयाय ॥ १२९ ॥
पुनः आसि' प्रभु पाय करिल विनय ।
'अज्ञ-अपराध' क्षमा करिते युयाय ॥ १२९ ॥

पुनः आसि'—दोबारा आकर; **प्रभु पाय**—महाप्रभु के चरणकमलों पर; **करिल विनय**—विनय की; **अज्ञ-अपराध**—एक अनजान व्यक्ति का अपराध; **क्षमा करिते**—क्षमा करने; **युयाय**—के योग्य होता है।

अनुवाद

मन्दिर में वापस आकर स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु से प्रार्थना की कि वे उस अबोध व्यक्ति को क्षमा कर दें।

तबे महाप्रभुर मने सन्तोष हइल ।
सारि करि' दुइ पाशे सबारे वसाइला ॥ १३० ॥
तबे महाप्रभुर मने सन्तोष हइल ।
सारि करि' दुइ पाशे सबारे वसाइला ॥ १३० ॥

तबे—तब; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **मने**—मन में; **सन्तोष हइला**—सन्तोष हुआ; **सारि करि'**—एक पंक्ति बनाकर; **दुइ पाशे**—दोनों ओर; **सबारे**—सबको; **वसाइला**—बैठाया।

अनुवाद

इस घटना के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु को परम सन्तोष हुआ। तब उन्होंने सारे भक्तों को दो पंक्तियों में दोनों ओर बैठ जाने को कहा।

आपने वसिया माझे, आपनार हाते ।
तृण, काङ्कर, कुटा लागिला कुड़ाइते ॥१३१॥
आपने वसिया माझे, आपनार हाते ।
तृण, काङ्कर, कुटा लागिला कुड़ाइते ॥१३१॥

आपने—स्वयं; **वसिया माझे**—मध्य में बैठकर; **आपनार हाते**—अपने हाथों से स्वयं; **तृण**—तिनके; **काङ्कर**—बालु-कण; **कुटा**—कूड़ा; **लागिला**—लग गये; **कुड़ाइते**—उठाने।

अनुवाद

तब महाप्रभु स्वयं बीच में बैठ गये और सभी तरह के तिनके, बालू के कण तथा गंदी वस्तुएँ चुनने लगे।

के कत कुड़ाय, सब एकत्र करिब ।
यार अल्प, तार ठाञि पिठा-पाना लइब ॥१३२॥
के कत कुड़ाय, सब एकत्र करिब ।
यार अल्प, तार ठाञि पिठा-पाना लइब ॥१३२॥

के कत कुड़ाय—किसने कितना इकट्ठा किया है; **सब**—सब; **एकत्र**—एक जगह इकट्ठा; **करिब**—मैं करूँगा; **यार**—जिसका; **अल्प**—थोड़ा; **तार ठाञि**—उससे; **पिठा-पाना लइब**—मिठाई और खीर जुर्माने के रूप में लूँगा।

अनुवाद

तिनके तथा बालू के कण चुनते हुए महाप्रभु ने कहा, "मैं हर एक के कूड़े को एकत्र करूँगा और जिसका कूड़ा कम होगा उससे कहूँगा कि वह जुर्माना के रूप में मिठाई (पिठा) तथा खीर (पाना) दे।"

एइ मत सब पुरी करिल शोधन ।
शीतल, निर्मल कैल——येन निज-मन ॥१३३॥

एइ मत सब पुरी करिल शोधन ।
शीतल, निर्मल कैल—ग्रेन निज-मन ॥ १३३ ॥

एइ मत—इस प्रकार; **सब पुरी**—गुण्डीचा पुरी का सब; **करिल शोधन**—उन्होंने साफ किया; **शीतल**—शीतल; **निर्मल**—निर्मल; **कैल**—किये; **ग्रेन**—जैसे; **निज-मन**—उसका अपना मन।

अनुवाद

इस तरह गुण्डिचा मन्दिर के सभी कमरे पूरी तरह स्वच्छ हो गये। सारे कमरे ठंडे तथा स्वच्छ थे, मानो निर्मल तथा शान्त मन हों।

प्रणालिका छाड़ि' यदि पानि वहाइल ।
नूतन नदी येन समुद्रे मिलिल ॥ १३४ ॥
प्रणालिका छाड़ि' ग्रदि पानि वहाइल ।
नूतन नदी ग्रेन समुद्रे मिलिल ॥ १३४ ॥

प्रणालिका—नालियों से पानी; **छाड़ि'**—छोड़कर; **ग्रदि**—जब; **पानि**—पानी; **वहाइल**—बहने लगा; **नूतन**—नयी; **नदी**—नदी; **ग्रेन**—जैसे; **समुद्रे**—समुद्र में; **मिलिल**—मिल रही हो।

अनुवाद

जब सारे कमरों का पानी हाल कमरे से होकर निकाला गया, तो ऐसा लगा जैसे कि नई नदियाँ समुद्र से मिलने जा रही हों।

एई-मत पुरद्वार-आगे पथ यत ।
सकल शोधिल, ताहा के वर्णिबे कत ॥ १३५ ॥
एइ-मत पुरद्वार-आगे पथ ग्रत ।
सकल शोधिल, ताहा के वर्णिबे कत ॥ १३५ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **पुर-द्वार**—मन्दिर के द्वार के; **आगे**—सामने की; **पथ ग्रत**—सभी सड़कें; **सकल**—सभी; **शोधिल**—इतनी साफ हो गईं; **ताहा**—उसका; **के वर्णिबे**—कौन वर्णन कर सकता है; **कत**—कितना।

अनुवाद

मन्दिर के द्वार के बाहर की सारी सड़कें भी साफ की गईं। किन्तु कोई यह नहीं बता सकता था कि यह सब कैसे हुआ।

तात्पर्य

गुण्डिचा मन्दिर की सफाई के विषय में टीका करते हुए श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कहते हैं कि श्री चैतन्य महाप्रभु जगत्-गुरू के रूप में स्वयं यह शिक्षा दे रहे थे कि किस तरह मनुष्य को शुद्ध तथा शान्त हृदय में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण का स्वागत करना चाहिए। यदि कोई चाहता है कि कृष्ण उसके हृदय में विराजमान हों, तो सर्वप्रथम उसे अपने हृदय को निर्मल बनाना चाहिए, जैसाकि श्री चैतन्य महाप्रभु ने *शिक्षाष्टक* में संस्तुति की है (*चेतोदर्पण मार्जनम्*)। इस युग में प्रत्येक व्यक्ति का हृदय मलिन रहता है, जैसाकि *श्रीमद्भागवत* में कहा गया है : *हृद्यन्तःस्थो ह्यभद्राणि।* हृदय के भीतर संचित सारी गंदगी को धो डालने के लिए हर एक को श्री चैतन्य महाप्रभु ने यही उपदेश दिया है कि वह हरे कृष्ण महामन्त्र का जप करे। इसका पहला परिणाम यह होगा कि हृदय स्वच्छ हो जायेगा (*चेतोदर्पण मार्जनम्*)। इसी तरह *श्रीमद्भागवत* (१.२.१७) में भी इस कथन की पुष्टि हुई है :

शृण्वतां स्वकथा कृष्णः पुण्यश्रवणकीर्तनः।
हृद्यन्तःस्थो ह्यभद्राणि विधुनोति सुहृत्सताम्॥

"परम भगवान् श्रीकृष्ण प्रत्येक के हृदय में स्थित परमात्मा हैं और सत्यनिष्ठ भक्तों के हितैषी हैं। भगवान् कृष्ण की शिक्षाएँ ध्यानपूर्वक सुने तथा कीर्तन किये जाने पर शुभ होती हैं। जो भक्त उनके सन्देशों का आस्वादन करता है, उस भक्त के हृदय से भगवान् भौतिक भोग की इच्छा को दूर कर देते हैं।"

यदि भक्त चाहता है कि उसका हृदय स्वच्छ बने, तो उसे भगवान् श्रीकृष्ण की महिमा का श्रवण और कीर्तन करना चाहिए (*शृण्वतां स्वकथाः कृष्णः*)। यह सरल विधि है। कृष्ण स्वयं हृदय को स्वच्छ करने में सहायक होंगे, क्योंकि वे पहले से वहाँ विराजमान हैं। कृष्ण चाहते हैं कि वे हृदय के भीतर विराजमान रहें और वे निर्देश देना चाहते हैं, किन्तु मनुष्य को अपने हृदय को उसी तरह स्वच्छ रखना होगा जिस तरह महाप्रभु ने गुण्डिचा मन्दिर को स्वच्छ रखा था।

अतएव भक्त को अपना हृदय उसी तरह निर्मल बनाना होगा, जिस तरह महाप्रभु ने गुण्डिचा मन्दिर को निर्मल बनाया था। इस तरह मनुष्य को शान्ति मिल सकती है और उसकी भक्ति समृद्ध हो सकती है। यदि हृदय में कूड़ा-करकट, बालू के कण, खर-पतवार या धूल भरी हो (अर्थात् *अन्याभिलाष-पूर्ण*) तो उसमें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को नहीं बिठाया जा सकता। हृदय को सकाम कर्म, तार्किक ज्ञान, योग और तथाकथित ध्यान के विभिन्न प्रकारों से प्राप्त समस्त भौतिक इच्छाओं से स्वच्छ रखना होगा। हृदय को बाह्य प्रयोजनों से रहित करके स्वच्छ रखना होगा। जैसाकि श्रील रूप गोस्वामी कहते हैं—*अन्याभिलाषिता शून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम्।* दूसरे शब्दों में, किसी तरह का बाह्य मन्तव्य नहीं रहना चाहिए। मनुष्य को भौतिक उन्नति, ज्ञान द्वारा भगवान् को समझना, सकाम कर्म, तप इत्यादि का प्रयास नहीं करना चाहिए। ये सारे कार्य भगवान् के रागानुग प्रेम के सहज विकास के विरुद्ध हैं। ज्योंही हृदय में ये उपस्थित होते हैं, समझिये कि हृदय मलिन हो जाता है। अतएव कृष्ण के विराजने के लिए वह स्थान अयोग्य हो जाता है। अपने हृदय को शुद्ध रखे बिना उनमें हम भगवान् की उपस्थिति की अनुभूति नहीं कर सकते।

भौतिक जगत् का भरपूर भोग करने की इच्छा को भौतिक इच्छा कहते हैं। आधुनिक भाषा में इसे आर्थिक विकास कहा जाता है। आर्थिक विकास की अत्यधिक इच्छा हृदय के भीतर के कूड़ा-करकट तथा बालू के कणों के समान मानी जाती है। यदि कोई व्यक्ति भौतिक कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहता है, तो उसका हृदय सदा विचलित रहेगा। जैसाकि नरोत्तम दास ठाकुर ने कहा है :

संसार विषानले, दिवानिशि हियाज्वले,
जुड़ाइते ना कैनु उपाय

दूसरे शब्दों में, भौतिक ऐश्वर्य के लिए प्रयास भक्ति के सिद्धान्त के विरुद्ध है। पुण्यकर्म के लिए महान यज्ञ करना, दान, तपस्या, उच्चतर ग्रहमण्डलों को प्राप्त करना तथा भौतिक जगत् में सुखपूर्वक जीवनयापन करना इत्यादि भौतिक भोग के अन्तर्गत आते हैं।

आधुनिक भौतिक लाभ भौतिक कल्मषरूपी धूल के समान हैं। जब

सकाम कर्म के चक्रवात से यह धूल उड़ती है, तो यह हृदय को आच्छादित कर देती है। इस तरह हृदयरूपी दर्पण धूल से आच्छादित हो जाता है। पुण्य तथा पापकर्म करने के लिए अनेक इच्छाएँ होती हैं, किन्तु लोग यह नहीं जानते कि किस तरह वे अपने हृदय जन्म-जन्मांतर तक मलिन बनाये रखते हैं। जो व्यक्ति सकाम कर्म की इच्छा नहीं छोड़ पाता उसे भौतिक कल्मषरूपी धूल से आवृत समझा जाता है। कर्मी प्राय: सोचता है कि सकाम कर्मों के फल को दूसरे कर्म से काटा जा सकता है। यह एक भूल है। यदि वह ऐसी भावना के बहकावे में आता है, तो वह अपने ही कर्म द्वारा ठगा जाता है। ऐसे कर्मों की तुलना हाथी के स्नान से की जाती है। हाथी कितनी भी अच्छी तरह से क्यों न स्नान करे, किन्तु नदी से बाहर निकलते ही वह भूमि से कुछ बालू लेता है और अपने सारे शरीर पर डाल लेता है। यदि कोई अपने विगत कर्मों का फल भोग रहा है, तो वह पुण्यकर्म करके उन्हें काट नहीं सकता। भौतिक योजनाओं द्वारा मानव-समाज के कष्टों को दूर नहीं किया जा सकता है। केवल कृष्णभावनामृत द्वारा ही इन कष्टों को दूर किया जा सकता है। जब कोई कृष्णभावनामृत ग्रहण करता है और भगवद्भक्ति में लगता है—भगवान् का कीर्तन करता है और उनकी महिमा का श्रवण करता है—तभी उसका हृदय स्वच्छ होना शुरू होता है। जब हृदय वास्तव में स्वच्छ हो जाता है, तब मनुष्य बिना किसी रुकावट के भगवान् को स्पष्ट रूप से वहाँ विराजमान देख सकता है। *श्रीमद्भागवत* (९.४.६८) में भगवान् इसकी पुष्टि करते हैं कि वे शुद्ध भक्त के हृदय में विराजमान रहते हैं। *साधवो हृदयं मह्यम् साधूनाम हृदयं त्वहम्* ।

निर्विशेष चिन्तन, अद्वैतवाद (भगवान् के अस्तित्व में विलीन होना), तार्किक ज्ञान, योग तथा ध्यान की तुलना बालू के कणों से की गई है। इन सबसे हृदय केवल क्षुब्ध होता है। ऐसे कार्यों से न तो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को प्रसन्न किया जा सकता है, न ही हम अपने हृदय में भगवान् को शान्तिपूर्वक बैठने का अवसर दे सकते हैं। बल्कि इन सबसे भगवान् केवल विचलित होते हैं। कभी-कभी योगी तथा ज्ञानी अपने अभ्यास की शुरूआत में प्रारम्भिक साधना के रूप में हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करते हैं। किन्तु जब वे गलत तरीके से सोचते हैं कि वे भवबन्धन से मुक्त हो चुके हैं, तो वे कीर्तन करना छोड़

देते हैं। वे मानते ही नहीं कि भगवान् का स्वरूप या भगवन्नाम ही चरम लक्ष्य हैं। पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ऐसे अभागों पर कभी कृपा नहीं करते, क्योंकि वे यह नहीं जानते कि भक्ति है क्या। ऐसे लोगों का वर्णन *भगवद्गीता* (१६.१९) में भगवान् कृष्ण ने इस प्रकार किया है :

तानहं द्विषतः क्रूरान् संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभान् आसुरीष्वेव योनिषु॥

"जो ईर्ष्यालु तथा शैतान हैं, जो मनुष्यों में सबसे अधम हैं, उन्हें मैं इस भवसागर में निरन्तर अनेक आसुरी योनियों में डाल देता हूँ।"

महाप्रभु ने अपने व्यावहारिक उदाहरण द्वारा हमें दिखलाया है कि बालू के सारे कणों को चुनकर बाहर ले जाकर फेंक देना चाहिए। श्री महाप्रभु ने मन्दिर के बाहर की भी सफाई की, क्योंकि उन्हें भय था कि बालू के ये कण कहीं भीतर न आ जाएँ। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर बतलाते हैं कि भले ही मनुष्य सकाम कर्म की इच्छा से मुक्त हो जाए, किन्तु कभी-कभी उसके हृदय के भीतर सकाम कर्म के प्रति सूक्ष्म इच्छा उत्पन्न हो जाती है। प्रायः मनुष्य सोचता है कि भक्ति-कार्य में प्रगति लाने के लिए वह व्यापार शुरू कर दे। किन्तु कल्मष इतना प्रबल होता है कि बाद में वह भ्रम में परिवर्तित हो सकता है, जिसे *कुटिनाटि* (छिद्रान्वेषण) तथा *प्रतिष्ठाशा* (उच्च पद के लिए नाम तथा यश की इच्छा), *जीव हिंसा* (*अन्य जीवों के लिए ईर्ष्या*), *निषिद्धाचार* (शास्त्र-वर्जित वस्तुएँ स्वीकार करना), *काम* (भौतिक लाभ की कामना) तथा *पूजा* (लोकप्रियता की लालसा) के रूप में बतलाया गया है। *कुटिनाटि* का अर्थ है कपट। *प्रतिष्ठाशा* का उदाहरण है, हरिदास ठाकुर की नकल करके एकान्त स्थान में रहने का प्रयास। उसकी असली इच्छा तो नाम तथा यश कमाने की रहती है—दूसरे शब्दों में, वह सोचता है कि मूर्ख लोग उसे हरिदास ठाकुर की तरह प्रतिष्ठित मानने लगेंगे, क्योंकि वह एकान्त स्थान में रहता है। ये सब भौतिक इच्छाएँ हैं। नये भक्त को अन्य भौतिक इच्छाएँ भी—यथा स्त्रियाँ तथा धन (कामिनी-कांचन) सता सकती हैं। इस तरह उसका हृदय गंदी बातों से पुनः भर जाता है और वह भौतिकतावादी की तरह निष्ठुर हो जाता है। धीरे-धीरे वह विख्यात भक्त या अवतार बनने की इच्छा करने लगता है।

जीव-हिंसा (अन्य जीवों की ईर्ष्या) शब्द का वास्तविक अर्थ है कृष्णभावनामृत का प्रचार बन्द कर देना। प्रचार-कार्य को *परोपकार* कहा गया है। जो लोग भक्ति के लाभों से परिचित नहीं हैं, उन्हें प्रचार द्वारा इसकी शिक्षा देनी चाहिए। यदि कोई प्रचार-कार्य बन्द करके एकान्त स्थान में बैठ जाता है, तो समझिये कि वह अपने आपको भौतिक कर्म में लगा रहा है। यदि कोई व्यक्ति मायावादियों से समझौता करना चाहता है, तो भी वह भौतिक कर्म में संलग्न होता है। भक्तों को अभक्तों के साथ कभी समझौता नहीं करना चाहिए। कोई व्यक्ति पेशेवर गुरु, योगी या चमत्कारी व्यक्ति बनकर जनता को धोखा देकर या भ्रमित करके भले ही उत्कृष्ट योगी के रूप में ख्याति प्राप्त कर ले, किन्तु ये सभी हृदय के भीतर भरे धूल, कूड़ा तथा बालू के कण ही समझे जाते हैं। इसके अतिरिक्त मनुष्य को विधि-विधानों का पालन करना चाहिए और अवैध यौन, जुआ, नशा तथा मांसाहार की इच्छा नहीं करनी चाहिए।

श्री चैतन्य महाप्रभु ने हमें व्यावहारिक उपदेश देने के लिए ही मन्दिर की दो बार सफाई की। उनके द्वारा की गई दूसरी सफाई अधिक पूर्ण थी। इसका भाव था भक्ति के मार्ग के सारे अवरोधों को दूर भगा देना। उन्होंने दृढ़ संकल्प के साथ मन्दिर की सफाई की जो इस बात से स्पष्ट है कि सफाई के लिए उन्होंने अपने खुद के वस्त्रों तक का प्रयोग किया। श्री चैतन्य महाप्रभु यह स्वयं यह देखना चाहते थे कि मन्दिर संगमरमर की तरह स्वच्छ हो जाए। स्वच्छ संगमरमर शीतलता प्रदान करता है। भक्ति का अर्थ है भौतिक कल्मष से उत्पन्न सारे उपद्रवों से शान्ति प्राप्त करना। दूसरे शब्दों में, यह वह विधि है, जिससे मन शान्त होता है। जब मनुष्य भक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता, तभी मन शान्त तथा नितान्त स्वच्छ रह सकता है।

चाहे कोई कितनी ही गंदगी को दूर क्यों न करे, कभी-कभी निर्विशेषवाद, अद्वैतवाद, सिद्धि तथा धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के लिए मन में सूक्ष्म इच्छाएँ बनी रहती हैं। ये सब स्वच्छ चादर में दाग के समान हैं। श्री चैतन्य महाप्रभु इन्हें भी धो डालना चाहते थे।

श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने व्यावहारिक कार्य से हमें बतलाया कि किस तरह अपने हृदयों को स्वच्छ किया जा सकता है। एक बार हृदय स्वच्छ हो

जाए, तो हमें उसमें आरूढ़ होने के लिए भगवान् श्रीकृष्ण को आमन्त्रित करना चाहिए और हमें प्रसाद बाँटकर तथा हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करके उत्सव मनाना चाहिए। श्री चैतन्य महाप्रभु हर भक्त को अपने निजी आचरण से शिक्षा दिया करते थे। श्री चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय का प्रसार करने वाला हर व्यक्ति ऐसी ही जिम्मेदारी लेता है। सफाई के दौरान महाप्रभु स्वयं लोगों को प्रताड़ित तथा प्रशंसित कर रहे थे, अत: जो आचार्य का कार्य कर रहे हैं, उन्हें महाप्रभु से सीखना चाहिए कि निजी उदाहरण के द्वारा भक्तों को किस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए। महाप्रभु उन लोगों से परम प्रसन्न थे, जो मन्दिर के भीतर एकत्र अवांछित वस्तुओं को निकालकर मन्दिर की सफाई कर रहे थे। यह *अनर्थ निवृत्ति* कहलाती है, जिसका अर्थ है समस्त अवांछित वस्तुओं से हृदय को स्वच्छ करना। इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा गुण्डिचा मन्दिर की सफाई का संचालन हमें यह जताने के लिए किया गया कि किस तरह हृदय को स्वच्छ तथा शान्त बनाकर भगवान् कृष्ण का स्वागत किया जाए और बिना किसी उत्पात के उन्हें हृदय के भीतर बिठाया जाए।

नृसिंह-मन्दिर-भितर-बाहिर शोधिल ।
क्षणेक विश्राम करि' नृत्य आरम्भिल ॥ १३६ ॥

नृसिंह-मन्दिर—नृसिंहदेव का मन्दिर; **भितर**—भीतर; **बाहिर**—बाहर; **शोधिल**—साफ किया; **क्षणेक**—कुछ ही क्षण; **विश्राम**—आराम; **करि'**—करने के बाद; **नृत्य**—नृत्य; **आरम्भिल**—आरम्भ हुआ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने नृसिंह मन्दिर की भी भीतर और बाहर से सफाई की। अन्त में उन्होंने कुछ मिनट विश्राम किया और तब नृत्य शुरू किया।

तात्पर्य

नृसिंह मन्दिर गुण्डिचा मन्दिर से बाहर ही एक सुन्दर मन्दिर है। इस मन्दिर में नृसिंह चतुर्दशी के दिन बहुत बड़ा उत्सव मनाया जाता है। नवद्वीप

में भी एक नृसिंह मन्दिर है, जहाँ पर यही उत्सव मनाया जाता है, जैसाकि मुरारि गुप्त ने अपनी पुस्तक *चैतन्य-चरित* में लिखा है।

चारि-दिके भक्त-गण करेन कीर्तन ।
मध्ये नृत्य करेन प्रभु मत्त-सिंह-सम ॥ १३७॥

चारि-दिके भक्त-गण करेन कीर्तन ।
मध्ये नृत्य करेन प्रभु मत्त-सिंह-सम ॥ १३७॥

चारि-दिके—चारों ओर; **भक्त-गण**—भक्तों ने; **करेन**—किया; **कीर्तन**—कीर्तन; **मध्ये**—मध्य में; **नृत्य**—नृत्य; **करेन**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **मत्त-सिंह-सम**—उन्मत्त सिंह की भाँति।

अनुवाद

सारे भक्तों ने श्री चैतन्य महाप्रभु के चारों ओर संकीर्तन किया और महाप्रभु एक उन्मत्त सिंह के समान बीच में नाचने लगे।

स्वेद, कम्प, वैवर्ण्याश्रु पुलक, हुङ्कार ।
निज-अङ्ग धुइ' आगे चले अश्रु-धार ॥ १३८॥

स्वेद, कम्प, वैवर्ण्याश्रु पुलक, हुङ्कार ।
निज-अङ्ग धुइ' आगे चले अश्रु-धार ॥ १३८॥

स्वेद—पसीना; **कम्प**—कंपन; **वैवर्ण्य**—रंग पीला पड़ना; **अश्रु**—अश्रु; **पुलक**—रोमांच होना; **हुङ्कार**—गर्जना; **निज-अङ्ग**—निजी शरीर; **धुइ'**—धोकर; **आगे**—आगे; **चले**—चली गई; **अश्रु-धार**—अश्रुधारा।

अनुवाद

हमेशा की तरह जब चैतन्य महाप्रभु नाचने लगे तो पसीना, कँपकँपी, विवर्णता (रंग फीका पड़ना), आँसू, हर्ष तथा हुंकार प्रकट होने लगे। उनकी आँखों के अश्रुओं ने उनके शरीर को तथा उनके समक्ष खड़े लोगों के शरीरों को धो दिया।

चारि-दिके भक्त-अङ्ग कैल प्रक्षालन ।
श्रावणेर मेघ येन करे वरिषण ॥ १३९॥

चारि-दिके भक्त-अङ्ग कैल प्रक्षालन ।
श्रावणेर मेघ प्रेन करे वरिषण ॥ १३९ ॥

चारि-दिके—चारों ओर; **भक्त-अङ्ग**—भक्तों के शरीर; **कैल**—किये; **प्रक्षालन**—धोये; **श्रावणेर मेघ**—ठीक श्रावण के महीने में मेघ की तरह; **प्रेन**—जैसे; **करे वरिषण**—बरसता है।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपनी आँखों के आँसुओं से सारे भक्तों के शरीरों को धो डाला। आँसू इस तरह गिर रहे थे मानों सावन मास की वर्षा हो।

महा-उच्च-सङ्कीर्तने आकाश भरिल ।
प्रभुर उद्दण्ड-नृत्ये भूमि-कम्प हैल ॥ १४० ॥
महा-उच्च-सङ्कीर्तने आकाश भरिल ।
प्रभुर उद्दण्ड-नृत्ये भूमि-कम्प हैल ॥ १४० ॥

महा-उच्च-सङ्कीर्तने—ऊँची आवाज में कीर्तन करने से; **आकाश**—आकाश; **भरिल**—भर गया; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **उद्दण्ड-नृत्ये**—नृत्य और ऊँचे कूदने से; **भूमि-कम्प**—भूकम्प; **हैल**—हो गया।

अनुवाद

महान् तथा जोर-जोर से उच्चरित होने वाले संकीर्तन से आकाश गूँज उठा और चैतन्य महाप्रभु के कूदने तथा नाचने से धरती हिलने लगी।

स्वरूपेर उच्च-गान प्रभुरे सदा भाय ।
आनन्दे उद्दण्ड नृत्य करे गौररायं ॥ १४१ ॥
स्वरूपेर उच्च-गान प्रभुरे सदा भाय ।
आनन्दे उद्दण्ड नृत्य करे गौरराय ॥ १४१ ॥

स्वरूपेर—स्वरूप दामोदर गोस्वामी का; **उच्च-गान**—उच्च गान; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **सदा भाय**—सदा भाता था; **आनन्दे**—आनन्द में; **उद्दण्ड नृत्य**—ऊँचे कूदना और नाचना; **करे**—किया; **गौरराय**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को स्वरूप दामोदर का जोर-जोर से संकीर्तन करना सदा पसन्द था। अतएव जब स्वरूप दामोदर गाते तो श्री चैतन्य महाप्रभु नाचते और हर्ष से ऊँचा उछलते थे।

এই-মত কত-ক্ষণ নৃত্য যে করিয়া ।
বিশ্রাম করিলা প্রভু সময় বুঝিয়া ॥১৪২॥

এइ-মত কত-ক্ষণ নৃত্য য়ে করিয়া ।
বিশ্রাম করিলা প্রভু সময় বুঝিয়া ॥ ১৪২॥

एइ-मत—इस प्रकार; **कत-क्षण**—कुछ क्षणों के लिए; **नृत्य**—नृत्य; **य्रे**—जो; **करिया**—करने के बाद; **विश्राम करिला**—आराम किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **समय बुझिया**—समय को समझकर।

अनुवाद

महाप्रभु इस तरह कुछ समय तक कीर्तन करते और नाचते रहे। अन्त में परिस्थिति को समझकर वे रुक गये।

আচার্য-গোসাঞির পুত্র শ্রী-গোপাল-নাম ।
নৃত্য করিতে তাঁরে আজ্ঞা দিল গৌরধাম ॥১৪৩॥

আচার্য্য-গোসাঞির পুত্র শ্রী-গোপাল-নাম ।
নৃত্য করিতে তাঁরে আজ্ঞা দিল গৌরধাম ॥ ১৪৩॥

आचार्य्य-गोसाञिर—श्री अद्वैत आचार्य का; **पुत्र**—पुत्र; **श्री-गोपाल-नाम**—श्री गोपाल नामक; **नृत्य करिते**—नृत्य करने के लिए; **ताँरे**—उसको; **आज्ञा**—आज्ञा; **दिल**—दी; **गौरधाम**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने अद्वैत आचार्य के पुत्र श्री गोपाल को नाचने का आदेश दिया।

প্রেমাবেশে নৃত্য করি' হইলা মূর্চ্ছিতে ।
অচেতন হঞা তেঁহ পড়িলা ভূমিতে ॥১৪৪॥

प्रेमावेशे नृत्य करि' हइला मूर्च्छिते ।
अचेतन हञा तेंह पड़िला भूमिते ॥ १४४॥

प्रेम-आवेशे—प्रेमावेश में; **नृत्य करि'**—नृत्य करते हुए; **हइला मूर्च्छिते**—मूर्च्छित हो गया; **अचेतन हञा**—अचेत होकर; **तेंह**—वह; **पड़िला**—गिर गया; **भूमिते**—भूमि पर।

अनुवाद

प्रेमावेश में नाचते हुए श्री गोपाल मूर्छित हो गया और अचेत होकर जमीन पर गिर पड़ा।

আস্তে-ব্যস্তে আচার্য তাঁরে কৈল কোলে ।
শ্বাস-রহিত দেখি' আচার্য হৈলা বিকলে ॥১৪৫॥

आस्ते-व्यस्ते आचार्य्य ताँरे कैल कोले ।
श्वास-रहित देखि' आचार्य्य हैला विकले ॥ १४५॥

आस्ते-व्यस्ते—बड़ी जल्दी में; **आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य ने; **ताँरे**—उसको; **कैल**—लिया; **कोले**—अपनी गोद में; **श्वास-रहित**—बिना श्वास के; **देखि'**—देखकर; **आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य; **हैला**—हो गये; **विकले**—व्याकुल।

अनुवाद

जब श्री गोपाल मूर्छित हो गया, तो अद्वैत आचार्य ने तुरन्त उसे अपनी गोद में उठा लिया। यह देखकर कि उसकी साँस नहीं चल रही, वे अत्यन्त क्षुब्ध हो उठे।

নৃসিংহের মন্ত্র পড়ি' মারে জল-ছাঁটি ।
হুঙ্কারের শব্দে ব্রহ্মাণ্ড যায় ফাটি' ॥১৪৬॥

नृसिंहेर मन्त्र पड़ि' मारे जल-छाँटि ।
हुङ्कारेर शब्दे ब्रह्माण्ड ग्राय फाटि' ॥ १४६॥

नृसिंहेर मन्त्र—नृसिंह देव की प्रार्थनाएँ; **पड़ि'**—पढ़कर; **मारे**—फेंका; **जल-छाँटि**—जल का छींटा; **हुङ्कारेर शब्दे**—गर्जने की आवाज से; **ब्रह्माण्ड**—सारा ब्रह्माण्ड; **ग्राय**—हो गया; **फाटि'**—फट गया।

अनुवाद

अद्वैत आचार्य तथा अन्य लोग भगवान् नृसिंह के नाम का उच्चारण

करके जल छिड़कने लगे। उच्चारण की हुंकार इतनी तेज थी कि उससे सारा ब्रह्माण्ड हिलता हुआ प्रतीत हुआ।

অনেক করিল, তবু না হয় চেতন ।
আচার্য কান্দেন, কান্দে সব ভক্ত-গণ ॥ ১৪৭॥

अनेक करिल, तबु ना हय चेतन ।
आचार्य्य कान्देन, कान्दे सब भक्त-गण ॥ १४७॥

अनेक करिल—अनेक प्रयास किये गये; **तबु**—फिर भी; **ना हय**—न आई; **चेतन**—चेतना; **आचार्य्य कान्देन**—अद्वैत आचार्य रोने लगे; **कान्दे**—रोने लगे; **सब भक्त-गण**—अन्य सारे भक्तगण भी।

अनुवाद

जब लड़के को कुछ समय तक होश नहीं आया, तो अद्वैत आचार्य तथा अन्य भक्तगण रोने लगे।

তবে মহাপ্রভু তাঁর বুকে হস্ত দিল ।
'উঠহ গোপাল' বলি' উচ্চৈঃস্বরে কহিল ॥ ১৪৮॥

तबे महाप्रभु ताँर बुके हस्त दिल ।
'उठह गोपाल' बलि' उच्चैःस्वरे कहिल ॥ १४८॥

तबे—तब; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ताँर बुके**—उसकी छाती पर; **हस्त**—हाथ; **दिल**—रखा; **उठह गोपाल**—उठो, गोपाल; **बलि'**—कहकर; **उच्चैः-स्वरे**—ऊँची आवाज में; **कहिल**—कहा।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्री गोपाल की छाती पर अपना हाथ रखा और जोर से बोले, "गोपाल, उठो!"

শুনিতেই গোপালের হইল চেতন ।
'হরি' বলি' নৃত্য করে সর্ব-ভক্ত-গণ ॥ ১৪৯॥

शुनितेइ गोपालेर हइल चेतन ।
'हरि' बलि' नृत्य करे सर्व-भक्त-गण ॥ १४९॥

शुनितेइ—सुनकर; **गोपालेर**—श्री गोपाल को; **हइल**—आ गई; **चेतन**—चेतना; **हरि बलि'**—हरि का पवित्र नाम लेकर; **नृत्य करे**—नृत्य करने लगे; **सर्व-भक्त-गण**—सभी भक्तगण।

अनुवाद

ज्योंही गोपाल ने श्री चैतन्य महाप्रभु की वाणी सुनी, उसे तुरन्त चेत हो गया। अतः सारे भक्त हरि का नाम लेकर नाचने लगे।

এই লীলা বর্ণিয়াছেন দাস বৃন্দাবন ।
অতএব সঙ্ক্ষেপ করি' করিলুঁ বর্ণন ॥১৫০॥

এइ লীলা বর্ণিয়াছেন দাস বৃন্দাবন ।
অতএব সঙ্ক্ষেপ করি' করিলুঁ বর্ণন ॥ ১৫০ ॥

एइ लीला—यह लीला; **वर्णियाछेन**—वर्णन की है; **दास वृन्दावन**—वृन्दावन दास ठाकुर; **अतएव**—अतएव; **सङ्क्षेप**—संक्षेप में; **करि'**—करके; **करिलुँ वर्णन**—मैंने वर्णन किया है।

अनुवाद

वृन्दावन दास ठाकुर ने इस घटना का विस्तार से वर्णन किया है, अतएव मैंने संक्षेप में ही इसे कहा है।

तात्पर्य

यह शिष्टाचार की बात है। यदि किसी पूर्ववर्ती आचार्य ने किसी विषय के बारे में कुछ लिखा है, तो निजी इन्द्रियतृप्ति के लिए उसे दुहराने की या आचार्य से आगे बढ़ जाने की आवश्यकता नहीं रहती। जब तक किसी विशेष सुधार की गुंजाईश न हो, ऐसा नहीं करना चाहिए।

তবে মহাপ্রভু ক্ষণেক বিশ্রাম করিয়া ।
স্নান করিবারে গেলা ভক্ত-গণ লঞা ॥১৫১॥

তবে মহাপ্রভু ক্ষণেক বিশ্রাম করিয়া ।
স্নান করিবারে গেলা ভক্ত-গণ লঞা ॥ ১৫১ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **क्षणेक**—कुछ समय के लिए; **विश्राम**

करिया—विश्राम किया; **स्नान करिबारे**—स्नान करने के लिए; **गेला**—गये; **भक्त-गण लञा**—सभी भक्तों को साथ लेकर।

अनुवाद

विश्राम करने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु तथा सारे भक्त स्नान करने चले गये।

तीरे उठि' परेन प्रभु शुष्क वसन ।
नृसिंह-देवे नमस्करि' गेला उपवन ॥ १५२॥

तीरे उठि' परेन प्रभु शुष्क वसन ।
नृसिंह-देवे नमस्करि' गेला उपवन ॥ १५२॥

तीरे उठि'—तट पर जाकर; **परेन**—पहने; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **शुष्क वसन**—सूखे वस्त्र; **नृसिंह-देवे**—भगवान् नृसिंहदेव को; **नमस्करि'**—नमस्कार करके; **गेला उपवन**—उद्यान में प्रविष्ट हुए।

अनुवाद

स्नान करने के बाद महाप्रभु ने सरोवर के किनारे खड़े होकर सूखे कपड़े पहने। फिर पास ही के मन्दिर में स्थित भगवान् नृसिंह देव को नमस्कार करके वे बगीचे में आये।

उद्याने वसिला प्रभु भक्त-गण लञा ।
तबे वाणीनाथ आइला महा-प्रसाद लञा ॥ १५३॥

उद्याने वसिला प्रभु भक्त-गण लञा ।
तबे वाणीनाथ आइला महा-प्रसाद लञा ॥ १५३॥

उद्याने—उद्यान में; **वसिला**—बैठ गये; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भक्त-गण लञा**—भक्तों के साथ; **तबे**—उस समय; **वाणीनाथ**—वाणीनाथ राय; **आइला**—आये; **महा-प्रसाद लञा**—सभी प्रकार का महाप्रसाद लेकर।

अनुवाद

उस बगीचे में श्री चैतन्य महाप्रभु अन्य भक्तों के साथ बैठ गये। तभी वाणीनाथ राय सभी प्रकार का प्रसाद लेकर आये।

কাশী-মিশ্র, তুলসী-পড়িছা—দুই জন ।
পঞ্চ-শত লোক যত করয়ে ভোজন ॥ ১৫৪ ॥
তত অন্ন-পিঠা-পানা সব পাঠাইল ।
দেখি' মহাপ্রভুর মনে সন্তোষ হইল ॥ ১৫৫ ॥

काशी-मिश्र, तुलसी-पड़िछा—दुइ जन ।
पञ्च-शत लोक यत करये भोजन ॥ १५४ ॥
तत अन्न-पिठा-पाना सब पाठाइल ।
देखि' महाप्रभुर मने सन्तोष हइल ॥ १५५ ॥

काशी-मिश्र—काशी मिश्र; **तुलसी-पड़िछा**—मन्दिर की देखरेख करने वाला, तुलसी; **दुइ जन**—दोनों व्यक्ति; **पञ्च-शत लोक**—पाँच सौ लोगों; **यत**—जितना; **करये भोजन**—खा सके; **तत**—उतना; **अन्न-पिठा-पाना**—अन्न, मिठाई तथा खीर; **सब**—सब; **पाठाइल**—भेज दिया; **देखि'**—देखकर; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **मने**—मन में; **सन्तोष**—सन्तोष; **हइल**—हुआ।

अनुवाद

काशी मिश्र तथा मन्दिर की देख-रेख करने वाला तुलसी—दोनों इतना अधिक प्रसाद लेकर आये जो पाँच सौ व्यक्तियों के खाने लायक था। इस प्रसाद में चावल, रोटियाँ, खीर तथा विविध प्रकार की तरकारियाँ थीं। इन्हें देखकर महाप्रभु अत्यन्त सन्तुष्ट हुए।

পুরী-গোসাঞি, মহাপ্রভু, ভারতী ব্রহ্মানন্দ ।
অদ্বৈত-আচার্য, আর প্রভু-নিত্যানন্দ ॥ ১৫৬ ॥

पुरी-गोसाञि, महाप्रभु, भारती ब्रह्मानन्द ।
अद्वैत-आचार्य्य, आर प्रभु-नित्यानन्द ॥ १५६ ॥

पुरी-गोसाञि—परमानन्द पुरी; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भारती ब्रह्मानन्द**—ब्रह्मानन्द भारती; **अद्वैत-आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य; **आर**—और; **प्रभु-नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के पास उपस्थित भक्तों में परमानन्द पुरी, ब्रह्मानन्द भारती, अद्वैत आचार्य तथा नित्यानन्द प्रभु थे।

আচার্যরত্ন, আচার্যনিধি, শ্রীবাস, গদাধর ।
শঙ্কর, নন্দনাচার্য, আর রাঘব, বক্রেশ্বর ॥ ১৫৭ ॥

আচার্য্যরত্ন, আচার্য্যনিধি, শ্রীবাস, গদাধর ।
শঙ্কর, নন্দনাচার্য্য, আর রাঘব, বক্রেশ্বর ॥ ১৫৭ ॥

আচার্য্যরত্ন—चन्द्रशेखर; **आचार्य्यनिधि**—आचार्य निधि; **श्रीवास**—श्रीवास ठाकुर; **गदाधर**—गदाधर पण्डित; **शङ्कर**—शंकर; **नन्दन-आचार्य्य**—नन्दनाचार्य; **आर**—और; **राघव**—राघव पण्डित; **वक्रेश्वर**—वक्रेश्वर।

अनुवाद

वहाँ पर आचार्यरत्न, आचार्यनिधि, श्रीवास ठाकुर, गदाधर पण्डित, शंकर, नन्दनाचार्य, राघव पण्डित तथा वक्रेश्वर भी उपस्थित थे।

প্রভু-আজ্ঞা পাঞা বৈসে আপনে সার্বভৌম ।
পিণ্ডার উপরে প্রভু বৈসে লঞা ভক্ত-গণ ॥ ১৫৮ ॥

প্রভু-আজ্ঞা পাঞা বৈসে আপনে সার্বভৌম ।
পিণ্ডার উপরে প্রভু বৈসে লঞা ভক্ত-গণ ॥ ১৫৮ ॥

प्रभु-आज्ञा—महाप्रभु की आज्ञा; **पाञा**—पाकर; **वैसे**—बैठ गये; **आपने**—स्वयं; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **पिण्डार उपरे**—ऊँचे मंच पर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **वैसे**—बैठ गये; **लञा**—के साथ; **भक्त-गण**—सभी भक्तगण।

अनुवाद

महाप्रभु की आज्ञा पाकर सार्वभौम भट्टाचार्य बैठ गये। श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके सारे भक्त काठ के चबूतरे (पिण्डार) पर बैठे।

তার তলে, তার তলে করি' অনুক্রম ।
উদ্যান ভরি' বৈসে ভক্ত করিতে ভোজন ॥ ১৫৯ ॥

তার তলে, তার তলে করি' অনুক্রম ।
উদ্যান ভরি' বৈসে ভক্ত করিতে ভোজন ॥ ১৫৯ ॥

तार तले—उनके नीचे; **तार तले**—उनके नीचे; **करि'**—इस प्रकार; **अनुक्रम**—क्रमिक रूप से; **उद्यान भरि'**—सारा उद्यान भरकर; **वैसे**—बैठ गये; **भक्त**—सारे भक्त; **करिते भोजन**—भोजन करने के लिए।

अनुवाद

इस तरह सारे भक्त एक-दूसरे के पीछे पंक्ति बनाकर भोजन करने के लिए बैठ गये।

'हरिदास' बलि' प्रभु डाके घने घन ।
दूरे रहि' हरिदास करे निवेदन ॥ १६०॥
'हरिदास' बलि' प्रभु डाके घने घन ।
दूरे रहि' हरिदास करे निवेदन ॥ १६०॥

हरिदास बलि'—हरिदास को पुकार कर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **डाके**—बुलाया; **घने घन**—बारम्बार; **दूरे रहि'**—दूर खड़े; **हरिदास**—ठाकुर हरिदास ने; **करे निवेदन**—निवेदन किया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु बारम्बार "हरिदास, हरिदास" कहकर पुकार रहे थे। वे उस समय दूर खड़े थे और वहीं से वे इस तरह बोले।

भक्त-सङ्गे प्रभु करुन प्रसाद अङ्गीकार ।
ए-सङ्गे बसिते योग्य नहि मुञि छार ॥ १६१॥
भक्त-सङ्गे प्रभु करुन प्रसाद अङ्गीकार ।
ए-सङ्गे वसिते योग्य नहि मुञि छार ॥ १६१॥

भक्त-सङ्गे प्रभु—चैतन्य महाप्रभु को भक्तों के साथ बैठने दो; **करुन**—उन्हें लेने दो; **प्रसाद**—प्रसाद; **अङ्गीकार**—ग्रहण; **ए-सङ्गे**—इस टोली के साथ; **वसिते**—बैठने के लिए; **योग्य**—योग्य; **नहि**—नहीं हूँ; **मुञि**—मैं; **छार**—अत्यन्त नीच।

अनुवाद

हरिदास ठाकुर ने कहा, "महाप्रभु! आप भक्तों के साथ भोजन ग्रहण करें। चूँकि मैं निन्दनीय हूँ, अतएव आप लोगों के बीच में नहीं बैठ सकता।

पाछे मोरे प्रसाद गोविन्द दिबे बहिर्द्वारे ।
मन जानि' प्रभु पुनः ना बलिल ताँरे ॥ १६२॥

पाछे मोरे प्रसाद गोविन्द दिबे बहिर्द्वारि ।
मन जानि' प्रभु पुनः ना बलिल ताँरे ॥ १६२ ॥

पाछे—आखिर में; **मोरे**—मुझे; **प्रसाद**—प्रसाद; **गोविन्द**—चैतन्य महाप्रभु का निजी सेवक गोविन्द; **दिबे**—देगा; **बहिर्-द्वारे**—द्वार के बाहर; **मन जानि'**—मन को जानकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **पुनः**—दोबारा; **ना**—नहीं; **बलिल**—बुलाया; **ताँरे**—उन्हें।

अनुवाद

"गोविन्द बाद में मुझे दरवाजे के बाहर प्रसाद दे जायेगा।" महाप्रभु ने उनके मन की बात जान कर फिर से नहीं पुकारा।

स्वरूप-गोसाञि, जगदानन्द, दामोदर ।
काशीश्वर, गोपीनाथ, वाणीनाथ, शङ्कर ॥ १६३ ॥
परिवेशन करे ताहाँ एइ सात-जन ।
मध्ये मध्ये हरि-ध्वनि करे भक्त-गण ॥ १६४ ॥

स्वरूप-गोसाञि—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **दामोदर**—दामोदर पण्डित; **काशीश्वर**—काशीश्वर; **गोपीनाथ, वाणीनाथ, शङ्कर**—गोपीनाथ, वाणीनाथ और शंकर; **परिवेशन करे**—वितरण किया; **ताहाँ**—वहाँ; **एइ**—ये; **सात-जन**—सात व्यक्ति; **मध्ये मध्ये**—बीच बीच में; **हरि-ध्वनि**—हरि का पावन नाम पुकारा; **करे**—किया; **भक्त-गण**—सभी भक्तों ने।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर गोस्वामी, जगदानन्द, दामोदर पण्डित, काशीश्वर, गोपीनाथ, वाणीनाथ तथा शंकर ने प्रसाद का वितरण किया और भक्तगण बीच-बीच में हरि नाम का उच्चारण करते जा रहे थे।

पुलिन-भोजन कृष्ण पूर्वे यैछे कैल ।
सेई लीला महाप्रभुर मने स्मृति हैल ॥ १६५ ॥

पुलिन-भोजन कृष्ण पूर्वे ग्रैछे कैल ।
सेइ लीला महाप्रभुर मने स्मृति हैल ॥ १६५ ॥

पुलिन—वन में; **भोजन**—भोजन; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **पूर्वे**—पहले; **ग्रैछे**—जैसा; **कैल**—किया; **सेइ लीला**—वही लीला; **महाप्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **मने**—मन में; **स्मृति हैल**—स्मरण हो आई।

अनुवाद

जिस तरह भगवान् श्रीकृष्ण ने पहले जंगल में भोजन किया था, श्री चैतन्य महाप्रभु को वही लीला याद हो आयी।

यद्यपि प्रेमावेशे प्रभु हैला अस्थिर ।
समय बुझिया प्रभु हैला किछु धीर ॥ १६६ ॥

यद्यपि प्रेमावेशे प्रभु हैला अस्थिर ।
समय बुझिया प्रभु हैला किछु धीर ॥ १६६ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमावेश में; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हैला**—हो गये; **अस्थिर**—विचलित; **समय बुझिया**—समय और परिस्थिति को जानकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हैला**—हो गये; **किछु**—कुछ; **धीर**—धीर।

अनुवाद

श्रीकृष्ण की लीलाओं के स्मरण मात्र से श्री चैतन्य महाप्रभु को प्रेमावेश हो आया, किन्तु समय तथा परिस्थिति को देखते हुए वे कुछ धीर बने रहे।

प्रभु कहे,—मोरे देह' लाफ्रा-व्यञ्जने ।
पिठा-पाना, अमृत-गुटिका देह' भक्त-गणे ॥ १६७ ॥

प्रभु कहे,—मोरे देह' लाफ्रा-व्यञ्जने ।
पिठा-पाना, अमृत-गुटिका देह' भक्त-गणे ॥ १६७ ॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **मोरे**—मुझे; **देह'**—दो; **लाफ्रा-व्यञ्जने**—साधारण तरकारी; **पिठा-पाना**—मिठाई, खीर; **अमृत-गुटिका**—अमृत-गुटिका नामक पकवान; **देह'**—दो; **भक्त-गणे**—भक्तों को।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "आप मुझे साधारण तरकारी, जिसे लाफरा व्यंजन कहते हैं, परोसें और सभी भक्तों को मिठाई, खीर तथा अमृत गुटिका जैसे उत्तम व्यंजन परोसें।"

तात्पर्य

लाफरा व्यंजन कई हरी तरकारियों का मिश्रण है। प्राय: इसे चावल के साथ मिलाकर गरीबों को दिया जाता है। *अमृत गुटिका* मोटी पूड़ी तथा औंटे दूध से बनाया गया एक व्यंजन है। इसे *अमृत रसावली* भी कहते हैं।

सर्वज्ञ प्रभु जानेन याँरे येइ भाय ।
ताँरे ताँरे सेइ देओयाय स्वरूप-द्वारायं ॥ १६८॥

सर्वज्ञ प्रभु जानेन याँरे येइ भाय ।
ताँरे ताँरे सेइ देओयाय स्वरूप-द्वाराय ॥ १६८॥

सर्व-ज्ञ प्रभु—सर्वज्ञाता श्री चैतन्य महाप्रभु; **जानेन**—जानते थे; **याँरे**—किसको; **येइ**—क्या; **भाय**—अच्छा लगता है; **ताँरे ताँरे**—प्रत्येक व्यक्ति को; **सेइ**—वही; **देओयाय**—दिलवाया; **स्वरूप-द्वाराय**—स्वरूप दामोदर से।

अनुवाद

चूँकि चैतन्य महाप्रभु सब कुछ जानने वाले हैं, अतएव वे जानते थे कि किस व्यक्ति को कौन-सा व्यंजन पसन्द है। इसलिए चैतन्य महाप्रभु के आदेश से हरेक भक्त को स्वरूप दामोदर के हाथों से उन व्यंजनों को भरपेट परोसा गया।

जगदानन्द वेड़ाय परिवेशन करिते ।
प्रभुर पाते भाल-द्रव्य देन आचम्बिते ॥ १६९॥

जगदानन्द बेड़ाय परिवेशन करिते ।
प्रभुर पाते भाल-द्रव्य देन आचम्बिते ॥ १६९॥

जगदानन्द—जगदानन्द; **बेड़ाय**—गये; **परिवेशन**—प्रसाद-वितरण; **करिते**—करने के लिए; **प्रभुर पाते**—श्री चैतन्य महाप्रभु की थाली में; **भाल-द्रव्य**—प्रथम श्रेणी के व्यंजन; **देन**—दिये; **आचम्बिते**—अचानक।

अनुवाद

जगदानन्द प्रसाद वितरण करने आये और उसने सहसा सर्वश्रेष्ठ व्यंजन महाप्रभु की पत्तल में परोस दिये।

यद्यपि दिले प्रभु ताँरे करेन रोष ।
बले-छले तबु देन, दिले से सन्तोष ॥ १७०॥

यद्यपि दिले प्रभु ताँरे करेन रोष ।
बले-छले तबु देन, दिले से सन्तोष ॥ १७०॥

यद्यपि—यद्यपि; **दिले**—इस प्रकार देने से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँरे**—उनको; **करेन**—किया; **रोष**—क्रोध; **बले-छले**—किसी न किसी प्रकार (कभी चतुराई से और कभी बलपूर्वक); **तबु**—फिर भी; **देन**—दिया; **दिले**—जब दिया; **से सन्तोष**—श्री चैतन्य महाप्रभु प्रसन्न हो गये।

अनुवाद

जब महाप्रभु की पत्तल में इतना अच्छा प्रसाद परोस दिया गया, तो वे बाहर से अत्यधिक क्रुद्ध प्रतीत हुए। किन्तु फिर भी जब कभी किसी न किसी बहाने से अथवा जबरदस्ती उनकी पत्तल पर व्यंजन परोस दिये जाते, तो महाप्रभु को अत्यधिक सन्तोष हुआ।

पुनरपि सेई द्रव्य करे निरीक्षण ।
ताँर भये प्रभु किछु करेन भक्षण ॥ १७१॥

पुनरपि सेइ द्रव्य करे निरीक्षण ।
ताँर भये प्रभु किछु करेन भक्षण ॥ १७१॥

पुनरपि—फिर; **सेइ द्रव्य**—वही पकवान; **करे निरीक्षण**—सावधानी से देखते; **ताँर भये**—जगदानन्द के भय से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **किछु**—कुछ; **करेन**—किया; **भक्षण**—ग्रहण।

अनुवाद

जब इस तरह भोजन परोस दिया जाता, तो महाप्रभु कुछ समय तक उसे देखते रहते। किन्तु जगदानन्द के भय से वे अन्ततः उसमें से कुछ न कुछ खा लेते।

না খাইলে জগদানন্দ করিবে উপবাস ।
তাঁর আগে কিছু খা'ন—মনে ঐ ত্রাস ॥ ১৭২॥

ना खाइले जगदानन्द करिबे उपवास ।
ताँर आगे किछु खा'न—मने ऐ त्रास ॥ १७२॥

ना खाइले—यदि वे न खाते; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **करिबे**—करेगा; **उपवास**—उपवास; **ताँर आगे**—उसके सामने; **किछु खा'न**—कुछ खाया; **मने**—मन में; **ऐ**—यही; **त्रास**—भय।

अनुवाद

महाप्रभु जानते थे कि यदि वे जगदानन्द द्वारा परोसा गया भोजन नहीं खायेंगे, तो वे अवश्य उपवास करेंगे। इस भय से श्री चैतन्य महाप्रभु ने उसके द्वारा दिये गये प्रसाद में से कुछ अंश खा लिया।

স্বরূপ-গোসাঞি ভাল মিষ্ট-প্রসাদ লঞা ।
প্রভুকে নিবেদন করে আগে দাণ্ডাঞা ॥ ১৭৩॥

स्वरूप-गोसाञि भाल मिष्ट-प्रसाद लञा ।
प्रभुके निवेदन करे आगे दाण्डाञा ॥ १७३॥

स्वरूप-गोसाञि—श्री स्वरूप दामोदर; **भाल**—उत्तम; **मिष्ट-प्रसाद**—मिठाई; **लञा**—लेकर; **प्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु से; **निवेदन करे**—निवेदन किया; **आगे**—उनके सामने; **दाण्डाञा**—खड़े होकर।

अनुवाद

तब स्वरूप दामोदर गोसांइ कुछ उत्तम मिठाइयाँ ले आये और महाप्रभु के सामने खड़े होकर उन्हें अर्पित किया।

এই মহা-প্রসাদ অল্প করহ আস্বাদন ।
দেখ, জগন্নাথ কৈছে কর্য়াছেন ভোজন ॥ ১৭৪॥

एइ महा-प्रसाद अल्प करह आस्वादन ।
देख, जगन्नाथ कैछे कर्याछेन भोजन ॥ १७४॥

एइ महा-प्रसाद—यह महाप्रसाद; **अल्प**—थोड़ा; **करह आस्वादन**—आस्वादन करो;

देख—जरा देखो; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ ने; **कैछे**—कैसा; **कर्म्माछेन**—किया है; **भोजन**—भोजन।

अनुवाद

तब स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने कहा, "इस महाप्रसाद में से थोड़ा ले लें और देखें कि भगवान् जगन्नाथ ने इसे किस प्रकार ग्रहण किया।"

एत बलि' आगे किछु करे समर्पण ।
ताँर स्नेहे प्रभु किछु करेन भोजन ॥ १७५ ॥

एत बलि' आगे किछु करे समर्पण ।
ताँर स्नेहे प्रभु किछु करेन भोजन ॥ १७५ ॥

एत बलि'—यह कहकर; **आगे**—सामने; **किछु**—कुछ; **करे समर्पण**—समर्पण किया; **ताँर**—उनके; **स्नेहे**—स्नेह के कारण; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **किछु**—कुछ; **करेन भोजन**—खाया।

अनुवाद

यह कहकर स्वरूप दामोदर गोसांइ ने महाप्रभु के सामने कुछ भोजन रख दिया और महाप्रभु ने स्नेहवश उसे ग्रहण किया।

एই মত দুই-জন করে বার-বার ।
বিচিত্র এই দুই ভক্তের স্নেহ-ব্যবহার ॥ ১৭৬ ॥

এই মত দুই-জন করে বার-বার ।
বিচিত্র এই দুই ভক্তের স্নেহ-ব্যবহার ॥ ১৭৬ ॥

এই মত—इस प्रकार; **দুই-জন**—दोनों ने (स्वरूप दामोदर और जगदानन्द); **করে**—किया; **বার-বার**—बार बार; **বিচিত্র**—अद्भुत; **এই**—इन; **দুই**—दोनों; **ভক্তের**—भक्तों का; **স্নেহ-ব্যবহার**—स्नेहपूर्ण व्यवहार।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर तथा जगदानन्द ने महाप्रभु को बारम्बार कुछ भोजन दिया। इस तरह उन्होंने महाप्रभु के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार किया। यह अत्यन्त असामान्य बात थी।

সার্বভৌমে প্রভু বসাঞাছেন বাম-পাশে ।
দুই ভক্তের স্নেহ দেখি' সার্বভৌম হাসে ॥ ১৭৭॥

সার্বভৌমে প্রভু বসাঞাছেন বাম-পাশে ।
দুই ভক্তের স্নেহ দেখি' সার্বভৌম হাসে ॥ ১৭৭॥

সার্বভৌমে—সার্বভৌম भट्टाचार्य को; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **वसाञाछेन**—बैठाया; **वाम-पाशे**—अपनी बाईं ओर; **दुइ भक्तेर**—दोनों भक्तों का; **स्नेह**—स्नेह; **देखि'**—देखकर; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **हासे**—हँसने लगे।

अनुवाद

महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य को अपने बाईं ओर बैठा लिया। सार्वभौम ने जब स्वरूप दामोदर तथा जगदानन्द का व्यवहार देखा, तो वे हँसने लगे।

সার্বভৌমে দেয়ান প্রভু প্রসাদ উত্তম ।
স্নেহ করি' বার-বার করান ভোজন ॥ ১৭৮॥

সার্বভৌমে দেয়ান প্রভু প্রসাদ উত্তম ।
স্নেহ করি' বার-বার করান ভোজন ॥ ১৭৮॥

सार्वभौमे—सार्वभौम भट्टाचार्य को; **देयान**—दूसरों से दिलवाया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **प्रसाद**—प्रसाद; **उत्तम**—उत्तम; **स्नेह करि'**—स्नेहपूर्वक; **बार-बार**—बारम्बार; **करान**—करवाया; **भोजन**—भोजन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु सार्वभौम भट्टाचार्य को भी उत्तम भोजन देना चाहते थे, अतएव उन्होंने परोसने वाले से बार-बार उनकी पत्तल में उत्तम भोजन परोसने को कहा।

গোপীনাথাচার্য উত্তম মহা-প্রসাদ আনি' ।
সার্বভৌমে দিয়া কহে সুমধুর বাণী ॥ ১৭৯॥

গোপীনাথাচার্য্য উত্তম মহা-প্রসাদ আনি' ।
সার্বভৌমে দিয়া কহে সুমধুর বাণী ॥ ১৭৯॥

गोपीनाथ-आचार्य्र—गोपीनाथ आचार्य; **उत्तम**—उत्तम; **महा-प्रसाद**—महाप्रसाद; **आनि'**—लाकर; **सार्वभौमे**—सार्वभौम भट्टाचार्य को; **दिया**—दिया; **कहे**—कहा; **सु-मधुर**—अति मधुर; **वाणी**—शब्द।

अनुवाद

गोपीनाथ आचार्य ने भी उत्तम भोजन लाकर मधुर वचन कहते हुए सार्वभौम भट्टाचार्य को दिया।

काहाँ भट्टाचार्येर पूर्व जड़-व्यवहार ।
काहाँ एइ परमानन्द,—करह विचार ॥ १८० ॥

काहाँ भट्टाचार्य्येर पूर्व जड़-व्यवहार ।
काहाँ एइ परमानन्द,—करह विचार ॥ १८० ॥

काहाँ—कहाँ; **भट्टाचार्य्येर**—सार्वभौम भट्टाचार्य का; **पूर्व**—पिछला; **जड़-व्यवहार**—जड़-व्यवहार; **काहाँ**—कहाँ; **एइ**—यह; **परम-आनन्द**—परमानन्द; **करह विचार**—जरा विचार करो।

अनुवाद

भट्टाचार्य को उत्तम भोजन परोसने के बाद गोपीनाथ आचार्य ने कहा, "जरा विचार करें कि भट्टाचार्य का पूर्ववर्ती भौतिक आचरण कैसा था! जरा विचार करें कि इस समय वे किस तरह दिव्य आनन्द भोग रहे हैं!"

तात्पर्य

सार्वभौम भट्टाचार्य पहले स्मार्त ब्राह्मण थे—अर्थात् वे भौतिक स्तर पर वैदिक नियमों का कड़ाई से पालन करते थे। संसारी स्तर पर किसी को विश्वास नहीं होता कि प्रसाद दिव्य होता है और गोविन्द ही आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं, या कि वैष्णव मुक्त जीव होता है। ये दिव्य विचार सामान्य वैदिक पण्डित की विचार-सीमा के परे होते हैं। अधिकांश वैदिक पण्डित वेदान्ती कहलाते हैं। ये तथाकथित वेदान्ती परम सत्य को निर्विशेष मानते हैं। उनका यह भी विश्वास है कि किसी विशेष जाति में उत्पन्न व्यक्ति तब तक अपनी जाति नहीं बदल सकता, जब तक वह मरकर फिर से जन्म न ले। स्मार्त ब्राह्मण इस तथ्य को भी नहीं मानते कि महाप्रसाद दिव्य होता है और भौतिक दृष्टि से अकलुषित होता है। प्रारम्भ में सार्वभौम भट्टाचार्य भौतिक स्तर पर वैदिक

विधि-विधानों को मानते थे, किन्तु गोपीनाथ आचार्य ने इंगित किया कि अब वही भट्टाचार्य किस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु की अहैतुकी कृपा से बदल चुके हैं। बदल जाने के कारण ही सार्वभौम ने वैष्णवों के साथ प्रसाद ग्रहण किया। वे श्री चैतन्य महाप्रभु की बगल में बैठे थे।

সার্বভৌম কহে,——আমি তার্কিক কুবুদ্ধি ।
তোমার প্রসাদে মোর এ সম্পত্সিদ্ধি ॥১৮১॥

सार्वभौम कहे,——आमि तार्किक कुबुद्धि ।
तोमार प्रसादे मोर ए सम्पत्सिद्धि ॥ १८१ ॥

सार्वभौम कहे—सार्वभौम भट्टाचार्य ने उत्तर दिया; **आमि**—मैं; **तार्किक**—तर्क करने वाला दुनियावी व्यक्ति; **कु-बुद्धि**—अल्प बुद्धिमान; **तोमार प्रसादे**—आपकी कृपा से; **मोर**—मेरा; **ए**—यह; **सम्पत्**—ऐश्वर्य; **सिद्धि**—सिद्ध हुआ।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने गोपीनाथ आचार्य को उत्तर दिया, "मैं अल्पबुद्धि तार्किक था। फिर भी आपकी कृपा से मुझे सिद्धि का यह ऐश्वर्य प्राप्त हो सका है।

মহাপ্রভু বিনা কেহ নাহি দয়াময় ।
কাকেরে গরুড় করে,——ঐছে কোন্‌হয় ॥১৮২॥

महाप्रभु विना केह नाहि दयामय ।
काकेरे गरुड़ करे,——ऐछे कोन्हय ॥ १८२ ॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **विना**—के बिना; **केह**—कोई; **नाहि**—नहीं है; **दया-मय**—इतना दयालु; **काकेरे**—कौए को; **गरुड़**—गरुड; **करे**—परिवर्तित किया; **ऐछे**—ऐसा; **कोन् हय**—अन्य कौन है।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य ने आगे कहा, "श्री चैतन्य महाप्रभु के अतिरिक्त इतना दयावान कौन हो सकता है? उन्होंने एक कौवे को गरुड़ बना दिया है। भला इतना दयावान और कौन हो सकता है?

तार्किक-शृगाल-सङ्गे भेउ-भेउ करि ।
सेइ मुखे एबे सदा कहि 'कृष्ण' 'हरि' ॥ १८३॥

तार्किक-शृगाल-सङ्गे भेउ-भेउ करि ।
सेइ मुखे एबे सदा कहि 'कृष्ण' 'हरि' ॥ १८३॥

तार्किक—तार्किक; **शृगाल**—गीदड़; **सङ्गे**—के संग; **भेउ-भेउ करि**—भौंकते हुए; **सेइ मुखे**—उसी मुख से; **एबे**—अब; **सदा**—सदा; **कहि**—बोलता हूँ; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम; **हरि**—हरि।

अनुवाद

"तार्किक व्यक्ति रूपी सियारों के साथ मैं भौं-भौं की गूँज करता था। अब मैं उसी मुँह से 'कृष्ण' तथा 'हरि' के पवित्र नामों का उच्चारण कर रहा हूँ।

काहाँ बहिर्मुख तार्किक-शिष्यगण-सङ्गे ।
काहाँ एइ सङ्ग-सुधा-समुद्र-तरङ्गे ॥ १८४॥

काहाँ बहिर्मुख तार्किक-शिष्यगण-सङ्गे ।
काहाँ एइ सङ्ग-सुधा-समुद्र-तरङ्गे ॥ १८४॥

काहाँ—जबकि; **बहिर्-मुख**—अभक्तगण; **तार्किक**—तर्क करने वाले; **शिष्य-गण**—शिष्यगण; **सङ्गे**—के साथ; **काहाँ**—अब; **एइ**—यह; **सङ्ग**—संगति; **सुधा**—अमृत के; **समुद्र**—समुद्र की; **तरङ्गे**—लहरों में।

अनुवाद

"कहाँ मैं अभक्त तार्किक शिष्यों की संगति में रहता था, कहाँ अब मैं भक्तों के संग-रूपी अमृत के सागर की लहरों में निमग्न हूँ।"

तात्पर्य

जैसाकि श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने बतलाया है, *बहिर्मुख* शब्द भौतिक सुख का भोग करने में लिप्त रहने वाले व्यक्ति का सूचक है। ऐसा व्यक्ति अपने आपको पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की बहिरंगा शक्ति का भोक्ता बताता है। बाह्य ऐश्वर्य द्वारा आकृष्ट होने के कारण अभक्त कृष्ण के साथ अपने घनिष्ठ सम्बन्ध को भूल जाता है। ऐसे व्यक्ति को कृष्णभावनाभावित होने का

विचार पसन्द नहीं आता। *श्रीमद्भागवत* (७.५.३०-३१) में श्रील प्रह्लाद महाराज ने यही बात कही है :

मतिर्न कृष्णे परतः स्वतो वा
मिथोऽभिपद्येत गृहव्रतानाम्।
अदान्तगोभिर्विशतां तमिस्रं
पुनः पुनश्चर्वितचर्वणानाम्॥
न ते विदुः स्वार्थगतिम् हि विष्णुम्
दुराशया ये बहिरर्थ-मानिनः।
अन्धा यथान्धैरुपनीयमाना-
स्तेऽपीश तंत्र्यामुरु-दाम्नि बद्धाः॥

ऐसे भौतिकतावादी जो भौतिक देह, भौतिक जगत् तथा भौतिक भोग के प्रति अत्यधिक आसक्त रहते हैं और जो अपनी भौतिक इन्द्रियों को वश में नहीं कर सकते, वे भौतिक अस्तित्व के गहनतम अंधकारमय स्थानों को प्राप्त होते हैं। ऐसे व्यक्ति न तो स्वयं, न ही सामूहिक प्रयासों से कृष्णभावनाभावित हो पाते हैं। ऐसे लोग यह समझ ही नहीं पाते कि मानव जीवन का चरम लक्ष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु को समझना है। मानव जीवन इसी विशेष उद्देश्य के लिए मिला है और मनुष्य को सभी प्रकार की तपस्याएँ तथा व्रत करने चाहिए तथा इन्द्रियतृप्ति की लालसा से दूर रहना चाहिए। भौतिकतावादी सदैव अंधे बने रहते हैं, क्योंकि उनका मार्गदर्शन सदैव अंधे मूढ़ लोग करते हैं। भौतिकतावादी व्यक्ति सोचता है कि वह कुछ भी करने के लिए स्वतन्त्र है। वह यह नहीं जानता कि वह प्रकृति के कठोर नियमों से बँधा हुआ है, न ही वह यह जानता है कि उसे एक शरीर से दूसरे में देहान्तर करना है और इसी भौतिक जगत् में सदा सड़ना है। ऐसे मूढ़ तथा मूर्ख लोग अपने मूर्ख नेताओं की इन्द्रियतृप्ति की प्रार्थनाओं के प्रति आकृष्ट होते हैं और यह नहीं समझ पाते कि कृष्णभावनामृत क्या है? आध्यात्मिक आकाश से बाहर भौतिक जगत् है और भौतिकतावादी मूर्ख नहीं समझ पाता कि इस भौतिक आकाश का विस्तार कितना है। तब भला वह आध्यात्मिक आकाश के बारे में क्या जान सकता है? भौतिकतावादी लोग केवल अपनी अपूर्ण इन्द्रियों पर विश्वास करते हैं और

प्रामाणिक शास्त्रों से कोई शिक्षा ग्रहण नहीं करते। वैदिक संस्कृति के अनुसार मनुष्य को शास्त्रों के प्रमाणों के माध्यम से देखना होता है। *शास्त्रचक्षुः*—वैदिक साहित्य के माध्यम से हर वस्तु को देखना चाहिए। इस तरह भौतिक जगत् तथा आध्यात्मिक जगत् में भेद किया जा सकता है। यदि ऐसे आदेशों की उपेक्षा की जाती है, तो आध्यात्मिक जगत् के अस्तित्व के प्रति आश्वस्त नहीं हुआ जा सकता। चूँकि भौतिकतावादी लोग अपनी आध्यात्मिक पहचान भूल चुके हैं, अतएव वे इसी भौतिक जगत् को सर्वस्व मान बैठते हैं। इसीलिए वे *बहिर्मुख* कहलाते हैं।

प्रभु कहे,—पूर्वे सिद्ध कृष्णे तोमार प्रीति ।
तोमा-सङ्गे आमा-सबार हैल कृष्णे मति ॥ १८५॥

प्रभु कहे,—पूर्वे सिद्ध कृष्णे तोमार प्रीति ।
तोमा-सङ्गे आमा-सबार हैल कृष्णे मति ॥ १८५॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **पूर्वे**—पहले; **सिद्ध**—सिद्ध; **कृष्णे**—कृष्णभावनामृत में; **तोमार**—आपका; **प्रीति**—कृष्ण के प्रति प्रेम; **तोमा-सङ्गे**—तुम्हारी संगति से; **आमा-सबार**—हम सबकी; **हैल**—हुई; **कृष्णे**—कृष्ण की ओर; **मति**—चेतना।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य को कहा, "आप अपने पूर्वजन्म से कृष्णभावनामृत में रहते आ रहे हो। आप कृष्ण से इतना प्रेम करते हो कि आपकी संगति से हम लोगों में कृष्णभावना विकसित हो रही है।"

भक्त-महिमा बाड़ाइते, भक्ते सुख दिते ।
महाप्रभु विना अन्य नाहि त्रिजगते ॥ १८६॥

भक्त-महिमा बाड़ाइते, भक्ते सुख दिते ।
महाप्रभु विना अन्य नाहि त्रिजगते ॥ १८६॥

भक्त-महिमा—भक्तों की महिमा; **बाड़ाइते**—बढ़ाने के लिए; **भक्ते**—भक्तों को; **सुख दिते**—सुख देने के लिए; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **विना**—के बिना; **अन्य**—अन्य कोई; **नाहि**—नहीं है; **त्रि-जगते**—तीनों भुवनों में।

अनुवाद

इस तरह तीनों लोकों के भीतर श्री चैतन्य महाप्रभु के अतिरिक्त ऐसा कोई अन्य व्यक्ति नहीं है, जो भक्तों की महिमा को बढ़ाने की इच्छा रखता हो और उन्हें सन्तोष प्रदान करता हो।

तात्पर्य

इस सम्बन्ध में कपिलदेव तथा देवहूति के मध्य हुई भक्तिविषयक वार्ता देखनी चाहिए, जो *श्रीमद्भागवत* के तृतीय स्कन्ध में पाई जाती है।

তবে প্রভু প্রত্যেকে, সব ভক্তের নাম লঞা ।
পিঠা-পানা দেওয়াইল প্রসাদ করিয়া ॥ ১৮৭॥

তবে প্রভু প্রত্যেকে, সব ভক্তের নাম লঞা ।
পিঠা-পানা দেওয়াইল প্রসাদ করিয়া ॥ ১৮৭॥

তবে—उसके बाद; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **প্রত্যেকে**—प्रत्येक; **সব ভক্তের**—सभी भक्तों के; **নাম**—नाम; **লঞা**—लेकर; **পিঠা-পানা**—मिठाई, खीर; **দেওয়াইল**—दिया; **প্রসাদ**—प्रसाद; **করিয়া**—बनाकर।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथजी पर चढ़ाया गया सारा पीठा-पाना (मिठाई तथा खीर) लेकर अन्य सभी भक्तों को एक एक करके बुला-बुलाकर उनमें वितरित कर दिया।

অদ্বৈত-নিত্যানন্দ বসিয়াছেন এক ঠাঞি ।
দুই-জনে ক্রীড়া-কলহ লাগিল তথাই ॥ ১৮৮॥

অদ্বৈত-নিত্যানন্দ বসিয়াছেন এক ঠাঞি ।
দুই-জনে ক্রীড়া-কলহ লাগিল তথাই ॥ ১৮৮॥

অদ্বৈত-নিত্যানন্দ—अद्वैत आचार्य और नित्यानन्द प्रभु; **বসিয়াছেন**—बैठ गये; **এক ঠাঞি**—साथ साथ; **দুই-জনে**—ये दोनों व्यक्ति; **ক্রীড়া-কলহ**—दिखावटी झगड़ा; **লাগিল**—करने लगे; **তথাই**—वहाँ।

अनुवाद

श्री अद्वैत आचार्य तथा नित्यानन्द प्रभु पास-पास बैठ गये और जब प्रसाद बाँटा जाने लगा, तो वे एक तरह के दिखावटी झगड़े (क्रीड़ा-कलह) में लग गये।

अद्वैत कहे,—अवधूतेर सङ्गे एक पङ्क्ति ।
भोजन करिलुँ, ना जानि हबे कोन्गति ॥ १८९॥
अद्वैत कहे,—अवधूतेर सङ्गे एक पङ्क्ति ।
भोजन करिलुँ, ना जानि हबे कोन्गति ॥ १८९॥

अद्वैत कहे—अद्वैत आचार्य ने कहा; **अवधूतेर सङ्गे**—एक अवधूत के साथ; **एक पङ्क्ति**—एक पंक्ति में; **भोजन करिलुँ**—मैं भोजन कर रहा हूँ; **ना जानि**—मैं नहीं जानता; **हबे**—होगी; **कोन्**—क्या; **गति**—गति।

अनुवाद

पहले अद्वैत आचार्य ने कहा, "मैं एक अज्ञात अवधूत के साथ पंक्ति में बैठा हूँ और उसके साथ भोजन कर रहा हूँ; अतः मैं नहीं जानता कि मेरी क्या गति होगी?

प्रभु त' सन्न्यासी, उँहार नाहि अपचय ।
अन्न-दोषे सन्न्यासीर दोष नाहि हय ॥ १९०॥
प्रभु त' सन्न्यासी, उँहार नाहि अपचय ।
अन्न-दोषे सन्न्यासीर दोष नाहि हय ॥ १९०॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **त'**—निस्सन्देह; **सन्न्यासी**—संन्यासी हैं; **उँहार**—उनके लिए; **नाहि**—नहीं है; **अपचय**—कोई खराबी; **अन्न-दोषे**—भोजन के दूषित होने से; **सन्न्यासीर**—संन्यासी के लिए; **दोष**—दोष; **नाहि**—नहीं; **हय**—होता है।

अनुवाद

"श्री चैतन्य महाप्रभु तो संन्यासी हैं। अतएव वे कोई दोष नहीं देखते। तथ्य तो यह है कि संन्यासी कहीं का भी अन्न खाने से प्रभावित नहीं होता।

''নান্ন-দোষেণ মস্করী''—এই শাস্ত্র-প্রমাণ ।
আমি ত' গৃহস্থ-ব্রাহ্মণ, আমার দোষ-স্থান ॥ ১৯১॥

"नान्न-दोषेण मस्करी"—एइ शास्त्र-प्रमाण ।
आमि त' गृहस्थ-ब्राह्मण, आमार दोष-स्थान ॥ १९१ ॥

न अन्न-दोषेण मस्करी—दूषित भोजन लेने से एक संन्यासी पर कोई प्रभाव नहीं होता; **एइ**—यह; **शास्त्र-प्रमाण**—शास्त्रों का प्रमाण; **आमि**—मैं; **त'**—निस्सन्देह; **गृहस्थ-ब्राह्मण**—गृहस्थ ब्राह्मण; **आमार**—मेरी; **दोष**—दूषित; **स्थान**—स्थिति।

अनुवाद

"शास्त्रों के अनुसार यदि संन्यासी दूसरे के घर में भोजन करे तो इसमें कोई त्रुटि नहीं है। किन्तु गृहस्थ ब्राह्मण के लिए इस तरह भोजन करना दोषपूर्ण है।

জন্ম-কুল-শীলাচার না জানি যাহার ।
তার সঙ্গে এক পঙ্ক্তি—বড় অনাচার ॥ ১৯২॥

जन्म-कुल-शीलाचार ना जानि य़ाहार ।
तार सङ्गे एक पङ्क्ति—बड़ अनाचार ॥ १९२ ॥

जन्म—जन्म; **कुल**—कुल; **शील**—चरित्र; **आचार**—व्यवहार; **ना**—नहीं; **जानि**—मैं जानता हूँ; **य़ाहार**—जिसका; **तार सङ्गे**—उसके साथ; **एक पङ्क्ति**—एक पंक्ति में; **बड़ अनाचार**—एक बड़ा दोष है।

अनुवाद

"जिन लोगों का पूर्वजन्म, कुल, चरित्र तथा आचरण अज्ञात हो, उनके साथ गृहस्थों को भोजन करना उचित नहीं है।"

নিত্যানন্দ কহে—তুমি অদ্বৈত-আচার্য ।
'অদ্বৈত-সিদ্ধান্তে' বাধে শুদ্ধ-ভক্তি-কার্য ॥ ১৯৩॥

नित्यानन्द कहे—तुमि अद्वैत-आचार्य्य ।
'अद्वैत-सिद्धान्ते' बाधे शुद्ध-भक्ति-कार्य्य ॥ १९३ ॥

नित्यानन्द कहे—नित्यानन्द प्रभु ने कहा; **तुमि**—आप; **अद्वैत-आचार्य्य**—अद्वैत आचार्य,

अद्वैतवाद के प्रचारक हो; **अद्वैत-सिद्धान्ते**—उस अद्वैतवाद में; **बाधे**—महान् रुकावट है; **शुद्ध-भक्ति-कार्य्य**—शुद्ध भक्ति।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु ने तुरन्त ही अद्वैत आचार्य का खण्डन करते हुए कहा, "आप निर्विशेष अद्वैतवाद के शिक्षक हो और अद्वैतवादी निष्कर्ष प्रगतिशील शुद्ध भक्ति के पथ में बहुत बड़ा अवरोध है।

তোমার সিদ্ধান্ত-সঙ্গ করে যেই জনে ।
'এক' বস্তু বিনা সেই 'দ্বিতীয়' নাহি মানে ॥ ১৯৪॥

तोमार सिद्धान्त-सङ्ग करे येइ जने ।
'एक' वस्तु विना सेइ 'द्वितीय' नाहि माने ॥ १९४॥

तोमार—आपके; **सिद्धान्त-सङ्ग**—सिद्धान्त को मानना; **करे**—करता है; **येइ जने**—जो व्यक्ति; **एक**—एक; **वस्तु**—वस्तु; **विना**—के बिना; **सेइ**—ऐसा व्यक्ति; **द्वितीय**—दूसरी वस्तु; **नाहि माने**—नहीं मानता।

अनुवाद

"जो आपके निर्विशेष अद्वैतवादी दर्शन में भाग लेता है, वह एक ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं स्वीकार करता।"

तात्पर्य

निर्विशेष अद्वैतवादी इसमें विश्वास नहीं करता कि ईश्वर ही एकमात्र पूजा के लक्ष्य हैं और सारे जीव उनके नित्य दास हैं। अद्वैतवादियों के अनुसार ईश्वर तथा भक्त भौतिक स्थिति में पृथक्-पृथक् हो सकते हैं, किन्तु जब वे आध्यात्मिक रूप से स्थित होते हैं, तब उनमें कोई अन्तर नहीं रह जाता। यह *अद्वैत सिद्धान्त* कहलाता है। अद्वैतवादी भगवद्भक्ति को भौतिक कर्म मानते हैं, अतएव वे ऐसे भक्ति-कार्यों को सकाम कर्म जैसा ही मानते हैं। यह अद्वैतवादी भूल ही भक्ति के मार्ग का सबसे बड़ा अवरोध है।

वास्तव में अद्वैत आचार्य तथा नित्यानन्द के बीच की यह वार्ता एक प्रकार की क्रीड़ा-कलह थी, जो सारे भक्तों के लिए महान् उपदेश का कार्य करती है। श्री नित्यानन्द प्रभु यह बतलाना चाहते थे कि शुद्ध भक्त अद्वैत आचार्य, अद्वैत सिद्धान्त से सहमत नहीं हैं। भक्ति का सिद्धान्त है :

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम्।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते॥

"विद्वान अध्यात्मवादी, जो परम सत्य को मानते हैं, वे इस अद्वैत तत्त्व को ब्रह्म, परमात्मा या भगवान् कहते हैं।" (*भागवत* १.२.११)

परम ज्ञान ब्रह्म, परमात्मा तथा भगवान्—इन सभी का ज्ञान होता है। यह सिद्धान्त अद्वैतवादियों के सिद्धान्त जैसा नहीं है। श्री अद्वैत आचार्य को आचार्य की पदवी दी गई थी, क्योंकि उन्होंने भक्ति-सम्प्रदाय का विस्तार किया था, न कि अद्वैतवाद दर्शन का। *चैतन्य-चरितामृत* के आरम्भ (आदि १.३) में वर्णित अद्वैत सिद्धान्त का सच्चा निष्कर्ष अद्वैतवादियों के दर्शन जैसा नहीं है। यहाँ *अद्वैत सिद्धान्त* का अर्थ है, *अद्वय ज्ञान* अर्थात् विविधता में एकता। वास्तव में श्रील नित्यानन्द प्रभु दोस्ताना क्रीड़ा-कलह के माध्यम से श्रील अद्वैत आचार्य की प्रशंसा कर रहे थे। वे भागवत के *वदन्ति तत्तत्त्वविदस्* के अनुसार वैष्णव सिद्धान्त प्रस्तुत कर रहे थे। *छान्दोग्य उपनिषद* के एक मन्त्र *एकमेवाद्वितीयम्* का भी यही निष्कर्ष है।

एक भक्त जानता है कि विविधता में एकत्व रहता है। शास्त्रों के मन्त्रों से न तो निर्विशेषवादियों के अद्वैत सिद्धान्त की पुष्टि होती है और न वैष्णव दर्शन विविधता से विहीन निर्विशेषवाद को मानता है। ब्रह्म महानतम हैं, जिनमें सारी वस्तुएँ निहित हैं और यही एकत्व है। जैसाकि कृष्ण ने *भगवद्गीता* (७.७) में कहा है—*मत्तः परतरं नान्यत्*—कृष्ण से बढ़कर और कोई नहीं है। वे मूल तत्त्व हैं, क्योंकि हर वस्तु उन्हीं से उद्भूत है। इस तरह वे अन्य सारी वस्तुओं से एक साथ अभिन्न और भिन्न हैं। भगवान् सदैव नाना प्रकार के आध्यात्मिक कार्यों में लगे रहते हैं, लेकिन अद्वैतवादी आध्यात्मिक विविधता को समझ नहीं सकता। निष्कर्ष यह निकलता है कि यद्यपि शक्तिमान और शक्ति एक ही हैं, तथापि शक्तिमान की शक्ति में विविधताएँ होती हैं। इन विविधताओं में अपने व्यक्तिगत स्वरूप के विभिन्न अवयवों के बीच, समान वर्ग के प्रकारों के बीच तथा विभिन्न वर्गों के प्रकारों के बीच भेद होता है। दूसरे शब्दों में, विभिन्न श्रेणियों में सदा विविधता होगी जिन्हें ज्ञान, ज्ञाता तथा ज्ञेय कहा जाता है। ज्ञान, ज्ञाता तथा ज्ञेय का शाश्वत अस्तित्व है। इसी कारण सभी भक्त भगवान्

के रूप, नाम, गुण, लीला तथा परिकर के सनातन अस्तित्व के विषय में जानते हैं। भक्तगण कभी भी अद्वैतवादी के एकत्व-प्रचार से सहमत नहीं होते। ज्ञान, ज्ञाता तथा ज्ञेय की धारणा में दृढ़ विश्वास के बिना न तो आध्यात्मिक विविधता को समझा जा सकता है, न ही आध्यात्मिक विविधता के दिव्य आनन्द का आस्वादन किया जा सकता है।

अद्वैतवाद का दर्शन बौद्ध दर्शन के शून्यवाद का दूसरा रूप है। श्री अद्वैत आचार्य से क्रीड़ा-कलह करते हुए श्री नित्यानन्द प्रभु इस प्रकार के अद्वैत दर्शन का खण्डन कर रहे थे। वैष्णव जन निश्चित रूप से भगवान् कृष्ण को आखरी एवं सर्वोपरि "एक" के रूप में स्वीकार करते हैं और जो भी कृष्ण से रहित है, उसे *माया* कहते हैं अर्थात् वह जिसका अस्तित्व ही नहीं है। बहिरंगा माया दो रूपों में प्रदर्शित होती है—*जीव* माया तथा *गुण* माया। भौतिक जगत् में *प्रकृति* तथा *प्रधान* होते हैं। किन्तु जब कोई कृष्णभावनाभावित हो जाता है, तो भौतिक तथा आध्यात्मिक विविधताओं में भेद नष्ट हो जाता है। प्रह्लाद महाराज जैसा महान् भक्त सारी वस्तुओं को एक—कृष्ण—मानता है। जैसाकि *श्रीमद्भागवत* (७.४.३७) में कहा गया है—*कृष्ण-ग्रह-गृहीतात्मा न वेद जगदीदृशम्* । जो कृष्णभावनाभावित होते हैं, वे भौतिक तथा आध्यात्मिक वस्तुओं में अन्तर नहीं करते। वे हर वस्तु को कृष्ण से सम्बन्धित अर्थात् आध्यात्मिक मानते हैं। *अद्वय ज्ञान दर्शन* द्वारा श्रील अद्वैत आचार्य ने शुद्ध भक्ति की महिमा का गुणगान किया है। श्रील नित्यानन्द प्रभु व्यंग्यपूर्वक निर्विशेष अद्वैतवादियों के दर्शन की भर्त्सना करते हैं और श्री अद्वैत प्रभु के यथार्थ अद्वैत दर्शन की प्रशंसा करते हैं।

হেন তোমার সঙ্গে মোর একত্রে ভোজন ।
না জানি, তোমার সঙ্গে কৈছে হয় মন ॥ ১৯৫॥
हेन तोमार सङ्गे मोर एकत्रे भोजन ।
ना जानि, तोमार सङ्गे कैछे हय मन ॥ १९५॥

हेन—इस प्रकार; **तोमार**—आपकी; **सङ्गे**—संगति में; **मोर**—मेरा; **एकत्रे**—इकट्ठे; **भोजन**—भोजन करना; **ना जानि**—मैं नहीं जानता; **तोमार सङ्गे**—आपकी संगति से; **कैछे**—कैसे; **हय मन**—मेरा मन बदल जायेगा।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु ने आगे कहा, "आप इस तरह के अद्वैतवादी हो! और मैं अब आपकी बगल में बैठकर खा रहा हूँ। मैं नहीं जानता कि इससे मेरा मन किस तरह प्रभावित होगा?"

तात्पर्य

सङ्गात् सञ्जायते कामः (*भगवद्गीता* २.६२)। मनुष्य की चेतना समाज तथा संगति के अनुसार विकसित होती है। जैसाकि श्रील नित्यानन्द प्रभु स्वीकार करते हैं—भक्त को उन लोगों की संगति करते समय अत्यन्त सावधान रहना चाहिए, जो भक्त नहीं हैं। जब किसी गृहस्थ भक्त ने महाप्रभु से पूछा कि भक्त का व्यवहार कैसा होना चाहिए, तो चैतन्य महाप्रभु ने तुरन्त उत्तर दिया :

असत्-सङ्ग-त्याग,—एइ वैष्णव-आचार।
'स्त्री-सङ्गी'—एक असाधु, 'कृष्णाभक्त' आर॥
(*चैतन्य-चरितामृत,* मध्य २२.८७)

वैष्णव या भक्त को अभक्तों से घनिष्ठता का त्याग कर देना आवश्यक है। श्रील रूप गोस्वामी ने *उपदेशामृत* में घनिष्ठता के लक्षणों का वर्णन इस प्रकार किया है :

ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति।
भुङ्क्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीतिलक्षणम्॥

भुङ्क्ते भोजयते शब्दों से सूचित होता है कि मनुष्य को भक्तों के साथ भोजन करना चाहिए। उसे अभक्तों द्वारा दिया गया भोजन नहीं करना चाहिए और उसे सावधानीपूर्वक टालना चाहिए। भक्त को अभक्त द्वारा दिये गये भोजन को स्वीकार ही नहीं करना चाहिए, विशेषतया ऐसा भोजन जो होटलों में बना हो या हवाई-जहाज में परोसा जाता है। इस सम्बन्ध में श्रील नित्यानन्द प्रभु का इशारा इस ओर है कि मायावादियों तथा सहजिया वैष्णवों जैसे प्रच्छन्न मायावादी लोग, जो भौतिकतावाद से प्रभावित हैं, उनके भोजन करने से बचना चाहिए।

এই-মত দুই-জনে করে বলাবলি ।
ব্যাজ-স্তুতি করে দুঁহে, যেন গালাগালি ॥ ১৯৬॥

এই-মত দুই-জনে করে বলাবলি ।
ব্যাজ-স্তুতি করে দুঁহে, যেন গালাগালি ॥ ১৯৬॥

এই-মত—इस प्रकार; **দুই-জনে**—दोनों व्यक्ति; **করে**—करते रहे; **বলাবলি**—दोष-प्रतिदोष लगाना; **ব্যাজ-স্তুতি**—दोष लगाने के बहाने प्रशंसा करना; **করে**—किया; **দুঁহে**—इन दोनों ने; **যেন**—जैसे; **গালাগালি**—गालियों का आदान-प्रदान।

अनुवाद

इस तरह दोनों बातें करते और एक-दूसरे की प्रशंसा करते रहे, यद्यपि उनकी प्रशंसा नकारात्मक जान पड़ती थी, क्योंकि ऐसा लग रहा था मानो वे एक दूसरे को गाली दे रहे हों।

তবে প্রভু সর্ব-বৈষ্ণবের নাম লঞা ।
মহা-প্রসাদ দেন মহা-অমৃত সিঞ্চিয়া ॥ ১৯৭॥

তবে প্রভু সর্ব-বৈষ্ণবের নাম লঞা ।
মহা-প্রসাদ দেন মহা-অমৃত সিঞ্চিয়া ॥ ১৯৭॥

তবে—तत्पश्चात्; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **সর্ব-বৈষ্ণবের**—सारे वैष्णवों के; **নাম**—नाम; **লঞা**—लेकर; **মহা-প্রসাদ**—महाप्रसाद; **দেন**—दिया; **মহা-অমৃত**—महा-अमृत; **সিঞ্চিয়া**—छिड़ककर।

अनुवाद

तत्पश्चात् सारे वैष्णवों का नाम ले-लेकर बुलाकर महाप्रभु ने महाप्रसाद वितरित किया, मानो वे अमृत छिड़क रहे हों। उस समय अद्वैत आचार्य तथा नित्यानन्द प्रभु की क्रीड़ा-कलह अधिकाधिक रोचक लगने लगी।

ভোজন করি' উঠে সবে হরি-ধ্বনি করি' ।
হরি-ধ্বনি উঠিল সব স্বর্গ-মর্ত্য ভরি' ॥ ১৯৮॥

ভোজন করি' উঠে সবে হরি-ধ্বনি করি' ।
হরি-ধ্বনি উঠিল সব স্বর্গ-মর্ত্য ভরি' ॥ ১৯৮॥

भोजन करि'—भोजन करने के बाद; **उठे**—उठ खड़े हुए; **सबे**—सभी; **हरि-ध्वनि**—हरिनाम की गूंज; **करि'**—करके; **हरि-ध्वनि**—हरिनाम की गूंज; **उठिल**—उठी; **सब**—सब; **स्वर्ग-मर्त्य**—उच्च और निम्न लोक; **भरि'**—भर गये।

अनुवाद

भोजन करने के बाद सारे वैष्णव "हरि" "हरि" की ध्वनि करते हुए उठ खड़े हुए। यह हरि-ध्वनि सभी उच्चलोकों तथा निम्नलोकों में भर गई।

तबे महाप्रभु सब निज-भक्त-गणे ।
सबाकारे श्री-हस्ते दिला माल्य-चन्दने ॥ १९९॥

तबे महाप्रभु सब निज-भक्त-गणे ।
सबाकारे श्री-हस्ते दिला माल्य-चन्दने ॥ १९९॥

तबे—तब; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **सब**—सब; **निज-भक्त-गणे**—निजी भक्तों को; **सबाकारे**—उन सबको; **श्री-हस्ते**—अपने हाथ से; **दिला**—दी; **माल्य-चन्दने**—पुष्प-मालाएं तथा चन्दन का लेप।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने सारे भक्त संगियों को अपने हाथ से फूल-मालाएँ तथा चन्दन-लेप प्रदान किया।

तबे परिवेशक स्वरूपादि सात जन ।
गृहेर भितरे कैल प्रसाद भोजन ॥२००॥

तबे परिवेशक स्वरूपादि सात जन ।
गृहेर भितरे कैल प्रसाद भोजन ॥ २००॥

तबे—तब; **परिवेशक**—प्रसाद बाँटने वाले; **स्वरूप-आदि**—स्वरूप दामोदर आदि; **सात जन**—सात भक्त; **गृहेर भितरे**—कमरे के भीतर; **कैल**—किया; **प्रसाद भोजन**—प्रसाद ग्रहण।

अनुवाद

प्रसाद वितरण में लगे स्वरूप दामोदर आदि सात भक्तों ने इसके बाद कमरे के भीतर भोजन किया।

প্রভুর অবশেষ গোবিন্দ রাখিল ধরিয়া ।
সেই অন্ন হরিদাসে কিছু দিল লঞা ॥২০১॥

প্রভুর অবশেষ গোবিন্দ রাখিল ধরিয়া ।
সেই অন্ন হরিদাসে কিছু দিল লঞা ॥ ২০১ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **अवशेष**—उच्छिष्ट; **गोविन्द**—गोविन्द ने; **राखिल**—बचा लिया; **धरिया**—रखकर; **सेइ अन्न**—वह प्रसाद; **हरिदासे**—हरिदास ठाकुर को; **किछु**—कुछ; **दिल**—दिया; **लञा**—लाकर।

अनुवाद

गोविन्द ने महाप्रभु द्वारा छोड़े गये कुछ शेष प्रसाद को सावधानी से रख लिया और बाद में इसमें से कुछ अंश हरिदास ठाकुर को लाकर दे दिया।

ভক্ত-গণ গোবিন্দ-পাশ কিছু মাগি' নিল ।
সেই প্রসাদান্ন গোবিন্দ আপনি পাইল ॥২০২॥

ভক্ত-গণ গোবিন্দ-পাশ কিছু মাগি' নিল ।
সেই প্রসাদান্ন গোবিন্দ আপনি পাইল ॥ ২০২ ॥

भक्त-गण—अन्य सभी भक्तों ने; **गोविन्द-पाश**—गोविन्द से; **किछु**—थोड़ा; **मागि'**—माँगकर; **निल**—लिया; **सेइ**—वह; **प्रसाद-अन्न**—बचा हुआ भोजन; **गोविन्द**—गोविन्द ने; **आपनि**—स्वयं भी; **पाइल**—खाया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के उच्छिष्ट प्रसाद को बाद में उन भक्तों में वितरित किया गया, जिन्होंने याचना की और फिर जो कुछ बचा उसे स्वयं गोविन्द ने खाया।

স্বতন্ত্র ঈশ্বর প্রভু করে নানা খেলা ।
'ধোয়া-পাখলা' নাম কৈল এই এক লীলা ॥২০৩॥

স্বতন্ত্র ঈশ্বর প্রভু করে নানা খেলা ।
'ধোয়া-পাখলা' নাম কৈল এই এক লীলা ॥ ২০৩ ॥

स्वतन्त्र ईश्वर—स्वतंत्र परम भगवान्; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करे**—की; **नाना**—अनेक; **खेला**—लीलाएँ; **धोया-पाखला**—धोना और साफ करना; **नाम**—नामक; **कैल**—की; **एइ**—यह; **एक**—एक; **लीला**—लीला।

अनुवाद

"परम स्वतन्त्र भगवान् नाना प्रकार की लीलाएँ करते हैं। गुण्डिचा मन्दिर की धुलाई और सफाई उनमें से केवल एक है।

आर दिने जगन्नाथेर 'नेत्रोत्सव' नाम ।
महोत्सव हैल भक्तेर प्राण-समान ॥२०४॥

आर दिने जगन्नाथेर 'नेत्रोत्सव' नाम ।
महोत्सव हैल भक्तेर प्राण-समान ॥ २०४॥

आर दिने—अगले दिन; **जगन्नाथेर**—भगवान् जगन्नाथ का; **नेत्र-उत्सव**—नेत्र दर्शन उत्सव; **नाम**—नामक; **महा-उत्सव**—महोत्सव; **हैल**—किया; **भक्तेर**—भक्तों के; **प्राण-समान**—प्राण समान।

अनुवाद

अगले दिन नेत्रोत्सव मनाया गया। यह महोत्सव भक्तों के प्राणों के समान था।

तात्पर्य

भगवान् जगन्नाथ के अभिषेक उत्सव के बाद, रथयात्रा से एक पखवाड़ा पहले के दिनों में भगवान् जगन्नाथ के शरीर को नहलाने के बाद फिर से रंगने की आवश्यकता पड़ती है। यह *अंग-राग* कहलाता है। नवयौवन के दिन प्रात:काल बड़ी ही सजधज के साथ नेत्रोत्सव मनाया जाता है, जो भक्तों को प्राणतुल्य प्रिय है।

पक्ष-दिन दुःखी लोक प्रभुर अदर्शने ।
दर्शन करिया लोक सुख पाइल मने ॥२०५॥

पक्ष-दिन दुःखी लोक प्रभुर अदर्शने ।
दर्शन करिया लोक सुख पाइल मने ॥ २०५॥

पक्ष-दिन—एक पखवाड़े तक; **दुःखी**—दुःखी; **लोक**—भक्त; **प्रभुर**—भगवान् जगन्नाथ के; **अदर्शने**—दर्शन के बिना रहे; **दर्शन करिया**—दर्शन करके; **लोक**—सभी भक्तों ने; **सुख**—सुख; **पाइल**—पाया; **मने**—मन में।

अनुवाद

एक पखवाड़े तक सारे लोग भगवान् जगन्नाथ का दर्शन न पाने से दुःखी थे। किन्तु इस उत्सव में भगवान् का दर्शन करके भक्तगण परम प्रसन्न थे।

महाप्रभु सुखे लञा सब भक्त-गण ।
जगन्नाथ-दरशने करिला गमन ॥२०६॥

महाप्रभु सुखे लञा सब भक्त-गण ।
जगन्नाथ-दरशने करिला गमन ॥ २०६ ॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सुखे**—बड़े आनन्दपूर्वक; **लञा**—लेकर; **सब**—सारे; **भक्त-गण**—भक्तगण को; **जगन्नाथ-दरशने**—भगवान् जगन्नाथ के दर्शन के लिए; **करिला गमन**—चले गये।

अनुवाद

इस अवसर पर सारे भक्तों को अपने साथ लेकर महाप्रभु ने आनन्दपूर्वक मन्दिर में भगवान् का दर्शन किया।

आगे काशीश्वर याय लोक निवारिया ।
पाछे गोविन्द याय जल-करङ्ग लञा ॥२०७॥

आगे काशीश्वर ग्राय लोक निवारिया ।
पाछे गोविन्द ग्राय जल-करङ्ग लञा ॥ २०७॥

आगे—सामने; **काशीश्वर**—काशीश्वर; **ग्राय**—गया; **लोक**—लोगों की भीड़; **निवारिया**—रोककर; **पाछे**—पीछे; **गोविन्द**—गोविन्द; **ग्राय**—गया; **जल**—पानी का; **करङ्ग**—कमंडलु; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु मन्दिर में दर्शन करने गये, तो काशीश्वर उनके

आगे-आगे चलकर भीड़ को रोक रहा था और पीछे-पीछे गोविन्द था, जो जल से भरा संन्यासी का कमण्डलु लिए हुए था।

तात्पर्य

करंग एक प्रकार का जलपात्र है, जिसे मायावादी संन्यासी तथा सामान्यत: अन्य सभी संन्यासी अपने साथ लिए रहते हैं।

প্রভুর আগে পুরী, ভারতী,—দুঁহার গমন ।
স্বরূপ, অদ্বৈত,—দুঁহের পার্শ্বে দুই-জন ॥২০৮॥

প্রভুর আগে পুরী, ভারতী,—দুঁহার গমন ।
স্বরূপ, অদ্বৈত,—দুঁহের পার্শ্বে দুই-জন ॥ ২০৮॥

प्रभुर आगे—श्री चैतन्य महाप्रभु के सामने; **पुरी**—परमानन्द पुरी; **भारती**—ब्रह्मानन्द भारती; **दुँहार गमन**—दोनों गये; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर; **अद्वैत**—श्री अद्वैत आचार्य; **दुँहेर**—दोनों की; **पार्श्वे**—दोनों ओर; **दुइ-जन**—दोनों व्यक्ति।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु मन्दिर की ओर जा रहे थे, तो परमानन्द पुरी तथा ब्रह्मानन्द भारती उनके आगे-आगे चल रहे थे और स्वरूप दामोदर तथा अद्वैत आचार्य उनके अगल-बगल चल रहे थे।

পাছে পাছে চলি' যায় আর ভক্ত-গণ ।
উৎকণ্ঠাতে গেলা সব জগন্নাথ-ভবন ॥২০৯॥

পাছে পাছে চলি' যায় আর ভক্ত-গণ ।
উৎকণ্ঠাতে গেলা সব জগন্নাথ-ভবন ॥ ২০৯॥

पाछे पाछे—पीछे-पीछे; **चलि' ग्राय**—चले गये; **आर**—अन्य; **भक्त-गण**—भक्तगण; **उत्कण्ठाते**—बड़ी उत्सुकता के साथ; **गेला**—गये; **सब**—सभी; **जगन्नाथ-भवन**—भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर में।

अनुवाद

अन्य सारे भक्त परम उत्सुकता के साथ महाप्रभु के पीछे-पीछे जगन्नाथजी के मन्दिर में गये।

দর্শন-লোভেতে করি' মর্যাদা লঙ্ঘন ।
ভোগ-মণ্ডপে যাঞা করে শ্রী-মুখ দর্শন ॥২১০॥

दर्शन-लोभेते करि' मर्य्यादा लङ्घन ।
भोग-मण्डपे य्याञा करे श्री-मुख दर्शन ॥ २१० ॥

दर्शन-लोभेते—दर्शन करने की उत्सुकता में; **करि'**—करके; **मर्य्यादा लङ्घन**—मर्यादा का उल्लंघन करके; **भोग-मण्डपे**—भोग लगाने के कमरे में; **य्याञा**—जाकर; **करे**—किया; **श्री-मुख दर्शन**—कमल मुख का दर्शन।

अनुवाद

उन सबने भगवान् का दर्शन करने की परम उत्सुकता के कारण विधि-विधानों की उपेक्षा कर दी और भगवान् के मुख का दर्शन करने के लिए ही वे सभी भोग-मन्दिर में गये।

तात्पर्य

अर्चाविग्रह-पूजा के अनेक विधान हैं। उदाहरणार्थ, किसी को उस कमरे में नहीं घुसने दिया जाता, जहाँ भगवान् जगन्नाथ को भोजन अर्पित किया जाता है। किन्तु यहाँ पर भगवान् को पन्द्रह दिनों से न देखने के कारण उत्सुकतावश सारे लोगों ने विधानों का उल्लंघन कर दिया और वे कमरे के भीतर घुस गये।

তৃষার্ত প্রভুর নেত্র—ভ্রমর-যুগল ।
গাঢ় তৃষ্ণায় পিয়ে কৃষ্ণের বদন-কমল ॥২১১॥

तृषार्त प्रभुर नेत्र—भ्रमर-य्युगल ।
गाढ़ तृष्णाय पिये कृष्णेर वदन-कमल ॥ २११ ॥

तृषा-आर्त—प्यासे; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **नेत्र**—नेत्र; **भ्रमर-य्युगल**—दो भ्रमरों की भाँति; **गाढ़**—गहरी; **तृष्णाय**—प्यास में; **पिये**—पिया; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **वदन-कमल**—कमल मुख।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् का दर्शन करने के लिए अत्यन्त प्यासे थे, अतः उनके दोनों नेत्र उन दो भौरों के तुल्य बन गये, जो साक्षात् कृष्णस्वरूप भगवान् जगन्नाथ के कमलवत् नेत्रों के मधु का पान कर रहे थे।

प्रफुल्ल-कमल जिनि' नयन-युगल ।
नीलमणि-दर्पण-कान्ति गण्ड झलमल ॥२१२॥

प्रफुल्ल-कमल जिनि' नयन-युगल ।
नीलमणि-दर्पण-कान्ति गण्ड झलमल ॥ २१२ ॥

प्रफुल्ल-कमल—खिले हुए कमल पुष्प; **जिनि'**—जीतकर; **नयन-युगल**—दोनों नेत्र; **नीलमणि**—नील मणि; **दर्पण**—दर्पण की; **कान्ति**—चमक; **गण्ड**—गर्दन; **झलमल**—चमकदार।

अनुवाद

भगवान् जगन्नाथ की आँखें प्रफुल्लित कमलों के सौन्दर्य को जीतने वाली और उनकी गर्दन नीलमणि से बने दर्पण की तरह कान्तियुक्त थी।

तात्पर्य

सामान्यतया श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथजी का दर्शन दूर से, गरुड़-स्तम्भ के पीछे खड़े होकर किया करते थे। किन्तु पन्द्रह दिनों से भगवान् का दर्शन न पा सकने के कारण महाप्रभु को अत्यधिक विरह सता रहा था। अतएव चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त उत्सुकतावश सभा-भवन को पार करते हुए वे भोग-कक्ष में पहुँचे, जिससे भगवान् जगन्नाथ का मुख देख सकें। श्लोक २१० में इस काम को *मर्यादा-लंघन* कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि किसी को श्रेष्ठजन के बहुत निकट नहीं जाना चाहिए। भगवान् के अर्चाविग्रह तथा गुरु को दूर से ही देखना चाहिए। इसे *मर्यादा* कहते हैं। अन्यथा जैसा कहा जाता है, अधिक जान-पहचान से सम्मान कम होता है। कभी-कभी अर्चाविग्रह या गुरु के अत्यधिक निकट जाने से नये भक्त का पतन होता है। अतएव अर्चाविग्रह तथा गुरु के निजी सेवकों को सावधान रहना चाहिए, नहीं तो कहीं ऐसा न हो कि असावधानीवश वे अपना कर्तव्य भूल जाएँ।

श्री चैतन्य महाप्रभु की आँखों की उपमा प्यासे भौंरों से दी गई है और श्री जगन्नाथ के नेत्रों की उपमा खिले हुए कमल के फूलों से। लेखक ने इन उपमाओं का प्रयोग श्री चैतन्य महाप्रभु का वह वर्णन करने के लिए किया है, जब वे जगन्नाथ के प्रेम में निमग्न थे।

बान्धुलीर फुल जिनि' अधर सुरङ्ग ।
ईषत् हसित कान्ति—अमृत-तरङ्ग ॥२१३॥

बान्धुलीर फुल जिनि' अधर सुरङ्ग ।
ईषत् हसित कान्ति—अमृत-तरङ्ग ॥ २१३ ॥

बान्धुलीर फुल—बांधुली नाम का लाल पुष्प; **जिनि'**—जीतकर; **अधर**—थोड़ी; **सुरङ्ग**—पाण्डु रंग; **ईषत्**—हल्का; **हसित**—मुस्कुराकर; **कान्ति**—चमक; **अमृत**—अमृत की; **तरङ्ग**—लहरें।

अनुवाद

भगवान् की ठुड्डी लाल रंग से रंगी थी, जो बान्धुली फूल की शोभा को मात करने वाली थी। इससे उनके मन्द हास की सुन्दरता बढ़ गई, जो अमृत की चमकीली तरंगों के समान थी।

श्री-मुख-सुन्दर-कान्ति बाढ़े क्षणे क्षणे ।
कोटि-भक्त-नेत्र-भृङ्ग करे मधु-पाने ॥२१४॥

श्री-मुख-सुन्दर-कान्ति बाढ़े क्षणे क्षणे ।
कोटि-भक्त-नेत्र-भृङ्ग करे मधु-पाने ॥ २१४ ॥

श्री-मुख—उनके सुन्दर मुख की; **सुन्दर-कान्ति**—सुन्दर कान्ति; **बाढ़े**—बढ़ गई; **क्षणे क्षणे**—प्रतिक्षण; **कोटि-भक्त**—लाखों भक्तों के; **नेत्र-भृङ्ग**—भौंरो जैसे नेत्र; **करे**—करने लगे; **मधु-पाने**—मधुपान में।

अनुवाद

उनके सुन्दर मुख की कान्ति प्रतिक्षण बढ़ती जा रही थी और करोड़ों भक्तों के नेत्र भौरों के तुल्य उसका मधुपान कर रहे थे।

यत पिये तत तृष्णा बाढ़े निरन्तर ।
मुखाम्बुज छाड़ि' नेत्र ना याय अन्तर ॥२१५॥

यत पिये तत तृष्णा बाढ़े निरन्तर ।
मुखाम्बुज छाड़ि' नेत्र ना याय अन्तर ॥ २१५ ॥

यत—जितना; **पिये**—वे पीते; **तत**—उतनी; **तृष्णा**—प्यास; **बाढ़े**—बढ़ती गई;

निरन्तर—निरन्तर; **मुख-अम्बुज**—कमलमुख; **छाड़ि'**—छोड़कर; **नेत्र**—नेत्र; **ना**—नहीं; **ग्राय**—गये; **अन्तर**—अलग।

अनुवाद

ज्यों-ज्यों उनके नेत्र भगवान् के कमल-मुख का अमृततुल्य मधु पी रहे थे, त्यों-त्यों उनकी प्यास बढ़ती जा रही थी। इस तरह उनकी आँखें उन्हें छोड़ नहीं पा रही थीं।

तात्पर्य

लघु भागवतामृत (१.५.५३८) में श्रील रूप गोस्वामी ने भगवान् के सौन्दर्य का वर्णन इस प्रकार किया है :

असमानोर्ध्वमाधुर्य तरङ्गामृतवारिधिः।
जङ्गमस्थावरोल्लासिरूपो गोपेन्द्रनन्दनः॥

"महाराज नन्द के पुत्र का सौन्दर्य अद्वितीय है। उनके सौन्दर्य से बढ़कर कुछ भी नहीं है, न ही उसकी बराबरी कोई कर सकता है। उनका सौन्दर्य अमृत-सागर में तरंगों के तुल्य है। यह सौन्दर्य जड़ तथा चेतन को समान रूप से आकृष्ट करने वाला है।"

इसी तरह *तंत्र-शास्त्र* में भगवान् के सौन्दर्य का अन्य वर्णन प्राप्त होता है :

कन्दर्पकोट्यर्बुदरूपशोभ
नीराज्यपादाब्जनखाञ्चलस्य।
कुत्राप्यदृष्टश्रुतरम्यकान्ते-
र्ध्यानं परं नन्दसुतस्य वक्ष्ये॥

"मैं नन्द महाराज के पुत्र श्रीकृष्ण पर परम ध्यान का वर्णन करूँगा। उनके चरणकमलों के अँगूठों के सिरों से करोड़ों कामदेवों के शरीरों का सौन्दर्य प्रतिबिम्बित होता है और उनके शरीर जैसी कान्ति न तो कहीं देखी गई है और न सुनी गई है।"

इस सम्बन्ध में *श्रीमद्भागवत* (१०.२९.१४) को भी देखना चाहिए।

এই-মত মহাপ্রভু লঞা ভক্ত-গণ ।
মধ্যাহ্ন পর্যন্ত কৈল শ্রী-মুখ দরশন ॥২১৬॥

एइ-मत महाप्रभु लञा भक्त-गण ।
मध्याह्न पर्य्यन्त कैल श्री-मुख दरशन ॥ २१६ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **लञा**—लेकर; **भक्त-गण**—अपने पार्षदों को; **मध्याह्न पर्य्यन्त**—दोपहर तक; **कैल**—किया; **श्री-मुख दरशन**—भगवान् जगन्नाथ के कमल मुख का दर्शन।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके भक्तों ने जगन्नाथजी के मुख का दर्शन करके दिव्य आनन्द प्राप्त किया। ऐसा दोपहर तक चलता रहा।

স্বেদ, কম্প, অশ্রু-জল বহে সর্ব-ক্ষণ ।
দর্শনের লোভে প্রভু করে সংবরণ ॥২১৭॥
स्वेद, कम्प, अश्रु-जल वहे सर्व-क्षण ।
दर्शनेर लोभे प्रभु करे संवरण ॥ २१७ ॥

स्वेद—पसीना; **कम्प**—कँपन; **अश्रु-जल**—अश्रु; **वहे**—बहने लगे; **सर्व-क्षण**—सदा; **दर्शनेर**—दर्शन के; **लोभे**—लोभ से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **करे**—की; **संवरण**—रोका।

अनुवाद

हमेशा की तरह चैतन्य महाप्रभु के शरीर में दिव्य आनन्द के लक्षण प्रकट हो आये। उन्हें पसीना हो आया और वे काँपने लगे। उनके नेत्रों से लगातार अश्रु की धारा बहने लगी। किन्तु महाप्रभु ने इन आँसुओं को रोका, जिससे भगवान् का मुख देखने में बाधा न पहुँचे।

মধ্যে মধ্যে ভোগ লাগে, মধ্যে দরশন ।
ভোগের সময়ে প্রভু করেন কীর্তন ॥২১৮॥
मध्ये मध्ये भोग लागे, मध्ये दरशन ।
भोगेर समये प्रभु करेन कीर्तन ॥ २१८ ॥

मध्ये मध्ये—बीच-बीच में; **भोग लागे**—भोग लगता था; **मध्ये**—कभी-कभी; **दरशन**—दर्शन; **भोगेर समये**—भोग लगाने के समय; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करेन कीर्तन**—कीर्तन करते थे।

अनुवाद

जब-जब भोग लगाया जाता, केवल तब ही भगवान् जगन्नाथ का मुख-दर्शन करने में बाधा पहुँचती थी। इसके बाद वे पुनः उनका मुख देखने लगते। जब भगवान् को भोग अर्पित किया जाता, तो श्री चैतन्य महाप्रभु कीर्तन करने लगते।

दर्शन-आनन्दे प्रभु सब पासरिला ।
भक्त-गण मध्याह्न करिते प्रभुरे लञा गेला ॥२१९॥

दर्शन-आनन्दे प्रभु सब पासरिला ।
भक्त-गण मध्याह्न करिते प्रभुरे लञा गेला ॥ २१९ ॥

दर्शन-आनन्दे—भगवान् का मुख देखने की खुशी के कारण; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सब**—सब कुछ; **पासरिला**—भूल गये; **भक्त-गण**—भक्तगण; **मध्याह्न**—दोपहर का भोजन; **करिते**—करने के लिए; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **लञा गेला**—ले गये।

अनुवाद

भगवान् जगन्नाथ के मुख का दर्शन करके परम आनन्द का अनुभव करने से श्री चैतन्य महाप्रभु सब कुछ भूल गये। किन्तु भक्तगण उन्हें दोपहर के समय भोजन कराने ले गये।

प्रातः-काले रथ-यात्रा हबेक जानिया ।
सेवक लागाय भोग द्विगुण करिया ॥२२०॥

प्रातः-काले रथ-यात्रा हबेक जानिया ।
सेवक लागाय भोग द्विगुण करिया ॥ २२० ॥

प्रातः-काले—सुबह के समय; **रथ-यात्रा**—रथयात्रा उत्सव; **हबेक**—होगा; **जानिया**—यह जानकर; **सेवक**—भगवान् के पुजारियों ने; **लागाय**—लगाया; **भोग**—भोग; **द्वि-गुण करिया**—दुगना करके।

अनुवाद

यह जानते हुए कि रथयात्रा प्रातःकाल शुरू होगी, जगन्नाथजी के सारे सेवकों ने चढ़ाये जाने वाले भोजन की मात्रा दुगुनी कर दी।

গুণ্ডিচা-মার্জন-লীলা সঙ্ক্ষেপে কহিল ।
যাহা দেখি' শুনি' পাপীর কৃষ্ণ-ভক্তি হৈল ॥২২১॥

গুণ্ডিচা-মার্জন-লীলা সঙ্ক্ষেপে কহিল ।
য়াহা দেখি' শুনি' পাপীর কৃষ্ণ-ভক্তি হৈল ॥ ২২১ ॥

গুণ্ডিচা-মার্জন-লীলা—गुण्डीचा मन्दिर साफ करने की लीला का; **সঙ্ক্ষেপে কহিল**—मैंने संक्षेप में वर्णन किया; **য়াহা দেখি' শুনি'**—जिसे देखकर और सुनकर; **পাপীর**—पापी लोगों की; **কৃষ্ণ-ভক্তি হৈল**—कृष्ण चेतना जाग उठी।

अनुवाद

मैंने गुण्डिचा मन्दिर के धोने और साफ करने की महाप्रभु की लीला का संक्षिप्त वर्णन किया है। इन लीलाओं को देखकर अथवा सुनकर पापी व्यक्तियों में भी कृष्ण-भक्ति जाग्रत हो सकती है।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥২২২॥

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে য়ার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ২২২ ॥

শ্রী-রূপ—श्रील रूप गोस्वामी; **রঘুনাথ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **পদে**—चरणकमलों पर; **য়ার**—जिनकी; **আশ**—आशा; **চৈতন্য-চরিতামৃত**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रंथ; **কহে**—वर्णन करता है; **কৃষ্ণদাস**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप और श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए और सदैव उनकी कृपा की कामना करते हुए मैं कृष्णदास उन्हीं के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए श्रीचैतन्य-चरितामृत कह रहा हूँ।

इस प्रकार श्रीचैतन्य-चरितामृत मध्यलीला के बारहवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ जिसमें गुण्डिचा मन्दिर की धुलाई तथा सफाई का वर्णन हुआ है ।